

गोकुलभा



मूल्य वीस रुपये (20 00)

प्रथम संस्करण 1983, © राजपाल एण्ड सन्स
SHOK SABHA (Novelized Drama) by Himanshu Srivastav.

पिछले कुछ वर्षों में मेरे समकालीन और समवर्षीय कई मित्रों ने अपने गद्य के दिनों की संक्षिप्त आंकियां लिपिबद्ध कीं। मैंने ऐसा नहीं किया। यह अकारण नहीं। सभ्यता में उस हमरम की तलाश में हूँ जो सबूत देते हुए मुझे यह बता सके कि तुम्हारे गद्य के दिन दखल हो चुके हैं और अब तुम तुल-बैन के बन्दे में बैठकर बागुरी टेर रहे हो। मगर अफसोस अब तक ऐसा कोई हिम्मतवर हमरम भिना नहीं।

कोई 'एकवचन' आत्मसूचि में प्रवेश कर गया तो क्या हुआ? 'बहुवचन' आदरवचन' तो घोर आसपीयुक्त अणुरूप में होंठों को हलसी से ढंकर खांत ही रहा है। किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं कि 'सोऊसमा' के नायक का दर्ब मेरा दर्ब है या मेरा ही दर्ब है। मैं उन लोगों में नहीं जो ऐसा मानते हैं कि यक्षिणी के विरह में यक्ष नहीं बरिन् विद्योत्तमा के बियोग में स्वयं कविअष्ट कालिदास रोये थे और उन्हीं क्षणों की अनुभूतियां 'मेघदूतम्' के अमृतछन्द बन गईं।

इस्मो-अरब के मिहाज से अपने मुस्क का हास बेहास है। कसा-संस्कृति के रक्षकों की अगमकुण्डली में सञ्चोचन करने को वे महाप्रभु बैठ गए हैं, जो नहीं जानते कि कसा और संस्कृति क्या है। इसीलिए एक कसाकार के दर्ब की तस्वीर लीचकर मैंने यह पेशकश की है कि वे अम्द रक्तस्नाद् संभिमियां अब तक हमारे कुण्डलीचक को बनाती-बिमाइती रहेंगी, अब तक जनसमाज स्वयं उठकर उन संभियों को अटोड़ डालने की बिद्या में संखनाब नहीं करेगा।

कुछ और? नहीं अब कुछ और नहीं।

व्यग्यशिल्पी
शरद जोशी
को
जो अनदेखे ही मुझे चाहते लगे

पूर्वी !

कितना सलियत ! कितना सुहाता ! !

बड़ा ही प्यारा माम है बायसिन की इस बाबूपरनी का। और बैठक से बाहर निकलते ही इसके बारे में समित बाबू ने रिमाफ कसा "यह अपने को कसाकार कहती है कसाकार ! छिः ! सोच कहते हैं, यह अपने बाप के स्वभाव पर गई है। मगर, यह एकदम गसत बात है। पैसों क मामसे में मुर्दाबाट के बोम से भी गई-मुबरी है।

आगे बढ़ते हुए अमरपाल ने गर्दन घुमा कर पूर्वी के मकान पर एक नजर डाली। इस मजर में जैसे पूर्वी के प्रति हिकारत की लोबा की मानत और मसामत थी। बोला 'जब तक कसाकारों के बारे में जो कुछ सुना या सबता है सब शमत सुना बा। कसाकार दीसत से नकरत करते हैं और यह दीसत पर क्रिदा रहती है।

"और मजे की बात यह है कि" ?

'क्या ?

समित बाबू ने कहा 'बबारी है। न आवमी न बीलाद।"

अमरपाल बोला 'अमा तुम जमीन छोड़कर हवाई जहाज की तरह इवा में बसते हो। जब आवमी ही नहीं ता बीलाद कहाँ से' ?

"अरे हां ।' समित को अपनी गमती समझ में आ गई।

अमरपाल ने कहा 'मजर इसका दूमरा पहलू भी है।

क्या ?" आगे बढ़ते हुए समित ने पूछा।

अमरपाल कहने लगा 'आवमी का सीधा-सावा अर्थ है—एक अदर आवमी एक पुरुष। वह स्वस्थ और रोममुक्त हो तो बीलाद दे सकता है। मजर सवास उछता है—अपना आवमी है या नहीं ? यानी कानून द्वारा दिया गया आवमी। आवमी अजर ऐसा आवमी नहीं है और वह किसी कुमारी को बीलाद दे देता है, तो उसकी पूरी बिन्दगी को बेमजा कर देता

है। ऐसे आदमी से मिली एक औलाद हजार बददुआओं से भी ज्यादा परेशानी में डालने वाली साबित होती है।”

ललित बाबू बोले, “हा, यह तो है।”

अमरपाल ने पूछा, “इस माने में यह कैसी है?”

ललित बाबू को कुछ सोचना पड़ गया। पूर्वी ने पहले ही उनका दिल जला दिया था। मगर, फिर भी सकोच प्रदर्शित करते हुए बोले, “छोडिये, वैसी बातें बोलने से जुवान गन्दी होती है।”

अमरपाल ने जैसे विना जाल डाले अच्छी-खासी मछली पकड़ ली थी। कहा, “बस, बस। जुवान गन्दी करने की जरूरत नहीं। सब कुछ समझ बाबू गया।”

“बया समझ गए?” ललित ने पूछा।

“यही कि बुलबुल अघेरे-अकेले में तराने छेडती है।”

‘रसना’ शब्द दो अर्थों को ध्वनित करता है। ज्ञानियो ने इस पर भी नियन्त्रण करने को कहा है—स्वादानुभूति और वाणी के सन्दर्भ में। सुन्वादु खाद्य पदार्थ का ग्रहण उस सीमा के बाद वर्जित है, जिस सीमा के बाद वह स्वाम्थ्य को हानि पहुंचाने वाला हो जाए और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर नीतिकार वहाँ निषेध करते हैं, जहाँ उससे पर-अहित होता है। समाज का जो व्यक्ति इन अर्थों में रसना पर नियन्त्रण करके चलता है, वह योगियो में योगिश्रेष्ठ कहलाने का अधिकारी है।

ललित बाबू जैसे लोग रसना को अपनी अनुगत, अपनी दासी न बना कर स्वयं उसके अनुगत और दाम बन जाते हैं। अमरपाल के यह कहने पर कि ‘बुलबुल अघेरे-अकेले में तराने छेडती है’ वह अपनी रसना के बश में हो आए और अमरपाल की कुहनी पकड़ कर हिलाते हुए बोले, “इसके बारे में ताल ठोक कर कुछ कहना तो मुश्किल है, मगर यह तो बहुत सारे लोग जानते हैं कि दिवाकर मलिक की दो और कन्याओं में से एक ने आत्महत्या कर ली और दूसरी किसी को ले कर निकल गई।”

“किसी को लेकर निकल गई?”

“हा, निकल ही गई। मगर, एक बात बतलाऊ। मैंने उसे कई बार

देला था।”

“कैसी थी ?”

समित बाबू ने स्मरण करते हुए बतलाया “सुन्दर थी सब कुछ भरा पुरा था। लेकिन हाँ इस पूर्वी के मुकामसे नहीं थी। पूर्वी बम्भीर है, वह पंचम थी। पूर्वी की भाँसों में रीठापन है। यह हमेशा रीती-रीती निगाहों से देखती है। उसकी भाँसों में जल्प-बनाना था। योया एक में बोलत और दूसरी में पीमाना था। वह बिच आरमी की आर देखती थी पर कर देखती।”

“तभी यह मुझ जितना उठने।”

“मगर अमरपाल की ” समित बाबू ने बाये कहा “जिसने चुपचाप आत्महत्या कर ली वह कुछ और ही थी।

“मतलब ?” अमरपाल ने पूछा।

“वह ईसा की बेटी थी।” समित बाबू ने निःसंकोच कहा।

शहर के कई ऐसे मूहम्मे ये बहाँ कुछ सोप माने-बजाने के बेहद शौकीन थे, संगीत-ओप्टिम्सों या सम्मेलनों का आयोजन करने में इनकी बिधेय रुचि होती। मगर से-से कर मसिक परिवार ही ऐसा था जो संगीत के प्रति समर्पित था। संगीत ही जीवन संगीत ही आजीविका। बिबाकर के पिता प्रसिद्ध पलायनवाचक के दावा अपने मुन के इने-पिने कुमाल मायकों में से थे और बिबाकर को एक संगीत-सम्मेलन में ‘नृत्य सभ्राट’ कह कर अभिनन्दित किया गया था। पूर्वी उगकी ही तीसरी और अन्तिम सन्तान थी।

कहते हैं बिबाकर ने बीसी कंचनकाया पायी थी उसकी बाली में भी अमृतोपम माधुर्य उठी तुलना में परिपूरित था। मेनों की प्रत्येक मदिमा मुकबियों का आकर्षणकेन्द्र होती। बहुत ही कम बोलते और जो कुछ बोलते सुननेवाला उसे बार-बार सुनना चाहता। गर्तकोचित काली-काली घुमपामी केषपशि ऐसी थी कि उसे देख कर एक-स-एक मुकेशियाँ ईर्ष्याविद्य हो उठती। सुभ्र बर्न हर ब्रम को तराघने में बिघाटा ने आसोचक की दृष्टि और चौन्दयसास्त्रसिद्ध संगतपदा की छेती का उप-
मोय किया था। नत्प करने के लिए जब रंभ पर जाते तो पाजेब के लिए

ही दर्शक आनन्दविभोर जाते । आखें बस एक ही दिशा को पहच
जिघर दिवाकर होते ।

लेकिन इस कलाकार का अन्त किस रूप में हुआ, इसी की वेटी
वायलिन की जादूगरनी, पूर्वी, पैसे को क्यों खुदा मानने लगी ?
सवाल का जवाब देने के लिए कौन आगे आएगा ?

समी-समी जिनसे बात टूट गई और जो बापस चले गए, वे दिखाकर मसिक को एक बापस में मूल्य प्रस्तुत करने के लिए ले जाने वाले थे। धीरे-धीरे सारी बातों की जानकारी होने पर दिखाकर ने अपनी असमर्थता बाहिर करते हुए कहा, "अमा कीजिएगा मैं बापसों में मूल्य नहीं करता।"

उधर से आए लोगों में से एक ने कहा "आपको उसी रोज इन्कार कर देना चाहिए था जिस रोज हम आपसे पहली बार मिल कर एडवान्स दे गए थे।"

दिखाकर बोस "उस रोज बाप सोम बड़ी क्लेशी में थे। मुझे क्या पकड़ा कर चले गए। आपने संकेत तक नहीं किया कि मुझे बापस में माचना होता।"

उधर से दूसरा बोला, "बापस में माचना हो या किसी संवित सम्मेलन में माचना तो बस माचना है। आपको जो मिलना चाहिए, हमने उनमें तो कोई कमी नहीं की।"

दिखाकर का बायीं-थील घायब ही कभी भंग हुआ हो। इस स्थिति में भी संयतचित्त बने रहे। बोस "आप माराज न हों। आपके लिए हुए रुपये खर्च-के-खर्च रहे हुए हैं। बापस किए देता हूँ। और उठ कर घर में रुपये सेन चत आए। समयमती से बोस, "भंगसवार को ही रुपये तुम्हें रक देने को दिए थे उन्हें बो।"

"क्यों, क्या बात है ?"

"भीष्टे बठसाळ्या। दो तो सही।"

बैठक में तीन सज्जन थे

रामप्रसाद विश्वमंगल और गुप्तेस्वर।

दिखाइ गुप्तेस्वर के छोटे भाई का था।

बहुत बड़ी हुकान है इनकी। विश्वमंगल एक

और रामप्रसाद किराना मर्चेंट हैं। दोस्तो मे से किसी के मुह से निकल गया, "किसी वाई जी के चक्कर मे न पडो। कोई वडिया ढासर ले चलो। वहा रग रहेगा।"

"वतलाइए आप लोग, किसे ले चला जाए। मुझे तो कोई ढग का ढासर ही नजर नही आता।" गुप्तेश्वर ने कहा था।

दूसरे दोस्ती ने सुझाया, "दिवाकर मलिक को ले चलो। एकदम से थैई-थैई मच जाएगी। कन्या पक्ष वाले भी याद करेंगे कि कोई वारात आई थी। दिवाकर जी का नाम वैसे भी चारो ओर फैला हुआ है। मगर हा, चम्मच-चम्मच-भर घी डालोगे, तो पूडिया नही छनेंगी।"

इस पर गुप्तेश्वर ने जैसे कमर कस कर कहा, "चम्मच-चम्मच-भर की क्या बात है जी, कहो न, मैं पीपा ही उडेल दू, मगर भीड़ नही लगेगी। वाई जी लोगो की बात ही कुछ और होती है।"

किराना मर्चेंट रामप्रसाद ने एक वारीक बात कही, "वैसे तो घर की मुर्गी दाल बराबर होती ही है, मगर दिवाकर मलिक और किसी वाई जी को एक ही तराजू पर नही तौला जा सकता। वाई जी लोगो का नाच देखने से ईमान खराब होने के सिवा कुछ नही होंता।"

और, अन्त मे शिवमगल ने जो कुछ कहा, उसे अन्तिम मान लिया गया। उसने कहा था, "दिवाकर जी की विदाई भारी रकम से होती है। मगर थोडे मे ही काम बन जाएगा। सुना है, आजकल उनकी पूछ कम हो गई है। ईदे-वकरीदे कही से बुलावा आ जाता है, नही तो सोलहो दण्ड एकादशी चलती है। भूखे पेट को वासी भी मिल जाए, तो मजे मे हजम हो जाता है। गाय दान नही करना पडेगा, नाम लेते ही वैतरणी का दूसरा किनारा सामने नजर आएगा।"

गुप्तेश्वर को शका हुई। जैसे किसी ने गुदगुदा दिया हो, उसने उचक कर पूछा, "मतलब?"

शिवमगल ने शका-समाधान किया, "दिवाकर मलिक सोचेंगे कि भूत की लगोटी भली। दरवाजे पर आयी हुई लक्ष्मी को लौटाना ठीक नही। सौ का पत्ता हम पहले फेंक आएंगे और जिस दिन वारात लौटेगी, एक घोती और ग्यारह रुपये से...।"

रामप्रसाद ने हस्तक्षेप करते हुए कहा 'प्यारह स्वर्गों से नहीं कम-से कम पञ्चीस तो डकर।'।

गुप्तेस्वर ने कहा था 'और, प्यारह से भी काम चल जाएगा। पञ्चीस-पचास तो उनको ऐसे भी मिल जाएंगे। नाच देखने वाले उनके आगे क्या इससे कुछ कम फेंकेंगे?'।

शिवमगन कुछ सोच कर बोला, नहीं नहीं यह नहीं हो सकता। अगर ऐसा हुआ तो दिवाकर मलिक सुरण्ड पादोंब खोल बैठेंगे। उनके नाचते बक्त हुस्नइबाजी नहीं चलेगी।

'अच्छा न सही। बसो पञ्चीस ही देखेंगे। ऊपर से सिस्का का एक गमछा भी देखें तो क्या कोई हर्ज है?'।

'फिर क्या कहेंगे हैं। गुप्तेस्वर, यह तो तुमने सोने में सुपान्न वाली बात कह दी।'।

और, यह बात अब निबिरोध तब हा गई कि दिवाकर मलिक बायात में एक गतक की हिसियत से ले जाए जाएंगे। लेकिन जब दिवाकर को वास्तविकता बतलाई गई तो देखा गया कि इसने कीड़े-मकोड़ा की ओर से आँखें फेर लीं। सौ रूपए सौटाते हुए दिवाकर मलिक ने कहा, भरने की बात है। आज तक मैं किसी भी बायात में नृत्य प्रदर्शन के नहीं गया। आप लोग राजा खादमी है बहुत सारे कमाकार मिल जा मुझे जमा कर बीबिए' भी हा आप लोगों ने मुझे स्मरण किया मेरा श्रीभाम्भ है भी हा। और दोनों हाथ जोड़ दिए। उनक ने कृतज्ञता के भाव छसक रहे थे। उठते हुए शिवमगन ने कहा था 'जी हम लोग किसी बाई जी को नहीं ले जाना चाहते इच्छत की ठहरी।

दिवाकर ने तीनों की ओर देखत हुए कहा 'जा मा ऐसा न संगीतकला को जीवित रखने में उनकी त्याग-तपस्या भी सचहमा के है। मैं उन लोगों के साथ नाचता नहीं यह दूसरी बात है। परन्तु, मैं बुना भी नहीं करता। अच्छा ममस्कार'।

बस वे सभी-सभी बापस चल गये हैं। दिवाकर मलिक उन्हें सुपाटी, इलायची खिलाकर बिदा करना चाहते थे। पूर्वी को पास भी।

पर भेजा था, पर वह समय पर वीडे लेकर लौटी ही नहीं। उनके चले जाने पर पूर्वी ने पिता के सामने आकर कहा, “पानवाले ने देने से इन्कार कर दिया। कहा, पहले के बहुत पैसे बाकी हैं। अब उधार-खाता नहीं चलेगा।”

दमयन्ती ने अपना विचार प्रकट किया, “अब मेरे इधर-उधर न भेजा करो। इधर-उधर जाने की उम्र गुजरती जा रही है।”

एक दीर्घ निश्वास छोड़कर दिवाकर कहते हैं, “दमयन्ती, तुम्हारा कहना कुछ बेजा नहीं है।”

पूर्वी वहा से हट कर जाने किधर खिसक गई है। तीन साल पहले पिता के माथ सगीत-समारोह में ग्वालियर गई थी। एक बुजुर्ग वायलिन-वादक के पास दो वायलिनें थी। उसने पूर्वी को प्यार करते हुए कहा, “विटिया, तुम बहुत बड़े कलाकार की बेटी हो। तुम कोई साज्र बजाना सीखो।”

“अच्छा।” पूर्वी बोली थी।

बुजुर्ग वायलिन-वादक ने पूछा, “तुम कौन-सा साज्र बजाना सीखना चाहती हो?”

पूर्वी ने महज भाव से कहा, “वायलिन।”

“ओह हो, मेरे रास्ते पर चलोगी?” वायलिन-वादक ने आह्लादित होते हुए कहा, “भई, बाह। मेरे पास दो वायलिनें हैं। एक तुम ले लो। पहले थोड़ा सीख लो। फिर नई ले लेना। वैसे इसके तार भी सधे हुए हैं।” और उसे अपनी पुरानी वाली वायलिन दे दी।

उम वक्त तो जैसे पूर्वी की समझ में कुछ नहीं आया कि यह क्या हो रहा है। दिवाकर मलिक पाम ही थे। इच्छा हुई, पूर्वी को वायलिन न लेने दें। पर, एक कलाकार दूसरे कलाकार के हृदय को ठेस नहीं पहुँचाता। पूर्वी ने भी तो ललच कर नहीं कहा था कि उसे वायलिन चाहिए। दिवाकर दो क्षण मौन रहे और फिर पूर्वी से बोले, “पूर्वी, सिर्फ वायलिन लेने में काम नहीं चलेगा। इनके पाव छुओ। कला गुरुजनो के आशीर्वाद और साधना में मिलती है।”

व्याहरहर्षीया पूर्वी ने बुजुर्ग बायमिन-वाइक के घरनों पर अपना क्षीप्त मचा दिया । उनके नेत्र सजल हो गए । मुँह से निकला, "मैं पता नहीं बह दिन बेस सकेगा या नहीं मगर मेरी यह बुझा है कि इस घन की तुम ऐसी हस्ती बनोमी कि जिस संगीत की महकिल में एक बार बजा होमी, वहाँ का सारा जनता तुम्हारे आसपास सिमट आया ।"

पूर्वी वहाँ से लिसक कर उठी पुरानी बायमिन पर रामबहार बजाने लगी थी । पति से सारी बातें सुन लेने के बाद दमयन्ती ने बड़े संकोच से कहा "दूधबाने को तो मैंने कह दिया है कि अभी दूध मत रो ।

"बहुत ठीक किया ।

"मगर वह जैसे मान रहा है ।"

"दिमा जाएगा ।"

"और घोबी को क्या कहू ?"

"क्या उसके भी जैसे निकल रहे हैं ?

"हां निकल रहे हैं।"

दिवाकर मलिक बोसे "कह देना उसके भी जैसे बूबेंपि नहीं ।"

"बह कहता है, बहुत बकरी है । दमयन्ती बोसी ।

"घर में आटा कितने पौज का है ? दिवाकर मलिक ने प्रसन्न किया ।

"तीन पौज तो पकर बसेगा ।

"अच्छ, इसा जाएगा ।

"घोबी का ।

दिवाकर मलिक ने बीच में ही कहा "बेसो शाम तक कुछ न कुछ करेगा । मई जिसका बाकी है बह तो मांगेगा ही ।"

"हां ।"

दिवाकर मलिक चारपाई पर बैठ गए । बड़े ही चके हुए स्वर में बोसे "दमयन्ती आज मम कुछ अस्वस्थ जान पड़ता है । अम्मास नहीं कर पाऊंगा ।

"छोड़ो क्या बुझापे तक रियाज ही करते रहोगे ?"

दिवाकर मलिक ने कहा "बुझापे तक ? यह क्या कहती हा दमयन्ती ? प्रम तो हुमेसा-हुमेसा रियाज ही होता है ।"

दमयन्ती को कुछ याद आ गया है। वह बैठक से निकल कर भीतर चली जाती है। पूर्वी वायलिन बजा रही है। स्वर कभी टूट जाता है, कभी एकरूप हो जाता है। उसकी आंखों के सामने अपनी दो बड़ी बहनों की तस्वीरें टगी हैं—कल्याणी और वागेश्वरी की। पूर्वी उन्हें देखने लगती है।

पीड़ामय जीवन का इतिहास जिस धान्त भूले पर रखकर डंक दिया गया था, वह भूसा एकाएक भूलने लगता है। इतिहास का तबारीक का एक सख्त फड़फड़ा कर जब आँसों के सामने आता है, तो हम एक स्टेज देखते हैं।

साइट पक्कर मया जाती है।

दिवाकर मसिक का छोटा-सा मकान।

मकान के भीतर एक आस कमरा। दक्षिण ओर बायीं दीवार में ऊपर की ओर एक खिड़की है मकड़ी की जो गलियारे की ओर लुप्त होगी इस समय वह बन्द है। इसी दक्षिण ओर बायीं दीवार में छोटी-छाटी दो आलमारियाँ बनी हैं। दोनों में नृत्य का सामान सहेज कर रखा गया है। कुपल और खंकर के समस्त बरनाभूषण मोरपंख मुकुट मकरन्द कुम्भल, बंदी डमरू बिमला मृगछाल और चौड़ी पट्टियों पर बूँदें भूषणगुच्छ। मूर्धन और पलायन उस बबूठरे पर एक कोने में रखे हुए हैं जिसे देखने से स्पष्ट आभास होता है कि इस बबूठरे पर नृत्याभ्यास किया जाता होगा। सन्धी-चौड़ी हठी इस प्रकार बिछी है कि कहीं नाम का तिकुड़न नहीं। ऊपर सफेद चादर—पूज में धुली। चार लम्बे-लम्बे बोसाकार तख्तिये। दो के आस सफेद कपड़े के हैं और दो पर रेसमी लोस। रेसमी लोसों का रंग हल्का पीसा है नारंगी बर्न के। छत स बढोबा मना है। उसके चारों किनारों पर चुनटवार झालर लगे हुए हैं। बहुत ही हल्के हरे रंग स पीवारों रंगी हुई हैं। साथ फुट की ऊँचाई पर हठीने से देस के बड़े-बड़े नर्तकी की तस्वीरें टपी हैं। धीमे के उस पार से जैसे वे नामने की ओर दख रहे हैं। दक्षिण की दीवार म जो छोटी-छाटी दो आलमारियाँ हैं उन दानो आलमारियों के बीच में दिवाकर मसिक के पितामह और पिता के चित्र लखर आ रहे हैं। उनके फ्रेम लुप्तहमे हैं।

साइट बबूठरे पर जाती है। सफेद धोती और हल्के पीसे पूरे रंग की

गजी पहने दिवाकर मलिक एक तकिये को खींच कर जैसे ही लेटना चाहते हैं कि सामने से दमयन्ती आ जाती है। पूछती है, "क्या कह रहे थे?"

"पूर्वी कहा है?"

"स्कूल गई।"

"क्या खाया उसने?"

"...।" दमयन्ती चुप।

"क्या भूखे पेट चली गई?"

"नहीं।"

"तो?"

"रात की थोड़ी सब्जी बची हुई थी। वही खाकर चली गई।"

"अरे...!" दिवाकर मलिक कुछ और नहीं कहते। दमयन्ती की ओर से आखें फेर लेते हैं और तकिये को खींच कर अपने सिर के पास ले आते हैं। फिर एकाएक मुह फेरे ही बोलते हैं, "बहुत भारी गलती कर गया मैं। कल वारात में नाचने वाली की बात स्वीकार कर लेनी चाहिए थी।"

"छि! यह क्या कहने लगे?"

"ठीक कह रहा हूँ, दमयन्ती।"

"नहीं, गलत कह रहे हो। यह सब एक आघात है जो थोड़े दिनों बाद निकल जाएगी।"

"और अपने साथ हमें भी आसमान में उछाल देगी।" दिवाकर मलिक दमयन्ती की ओर घूमकर आगे कहते हैं, "मेरी तबियत कुछ सुस्त लग रही है। मैं सोऊंगा।"

"ठीक है, सो रहो।"

"मगर तुम एक बात का ध्यान रखना। फिज़ूल लोगों से मिलने के लिए मुझे मत जगाना। कह देना, घर में नहीं हैं।"

"अच्छा।"

दमयन्ती कमरे से बाहर निकलती है। दिवाकर मलिक पेट के बल सा रहते हैं।

सारी बलियाँ बुझ चुकी हैं। साज बनाने वाले निष्क्रिय हो चुके हैं। उमकी उमसियों के अपने पीर कटे हुए दीख रहे हैं। वे गुड़मुड़ी हो गई हैं। नेपथ्य का कासा पर्दा बिना हवा के धीरे-धीरे काँप रहा है। उसके बीच में एक बड़ा-सा सात प्रस्नचिह्न बना हुआ है। स्टेज की छत में एक हल्की-सी रोशनी उतरती है और उस प्रस्नचिह्न पर बिखर जाती है बिचित्र है यह स्टेज !

दर्शकों को यिन पाना मुश्किल है। वे करोड़ों की संख्या में हैं और उन सबन अपनी-अपनी आँखों पर कासी पट्टियाँ बड़ा ली हैं। उनकी बांहों पर एक-एक चौड़ा बिस्मा लमा हुआ है जिस पर सुन्दर अक्षरों में लिखा हुआ है

'हम झुड़ कसा के प्यासे हैं।

पूरी दर्शकबीचा में सम्पाटा छाया हुआ है। कोई किसी स बातें नहीं कर रहा है। जमता है सभी एक-दूसरे के लिए बचनबी हैं। एकाएक कोई अज्ञात मारीस्वर ठहाका लगाता है और पूरे स्टेज पर घुआ फँस पाता है। नीचे बैठे साज बनाने वाले डर कर नीचे गिर पड़त हैं। धीरे धीरे घुमा छंने समता है और बेस झुक होता है। दर्शक बेसुमार हैं और टिकटवर पर बफ बरस रही है। बुकिंग क्लर्क बरबर काँप रहा है।

मध्यस्तरीय किराना-भण्डार।

आदल दास आटा मसाले नमक, अचार, पापड़ स्ना चीन, पाउडर, चाबुन कसा सादा अड़ू, टॉफी चॉकलेट बिस्कुट, ची ठेल, चीनी मीठा रंग, चाय कॉफी बैटरी स्टोब-पिन—सब कुछ मबास्वान इयाद से रसा हुआ।

और यह रहा कथानक का एक हिस्सा।

प्यारखर्पीया पूर्वी स्कूल म है। टिफिन की छुट्टी हो चुकी है। कसा की और आनी-पहचानी लड़कियाँ नास्ता करने सनी हैं। पूर्वी के हॉठ

सूखे हैं। पेट जैसे पीठ से चिपका जा रहा है। वह घटी बजते ही वर्ग में निकलती है और अहाते की पश्चिम वाली दीवार की ओर तेजी से भागती है। वायें हाथ में सिर्फ लकड़ी की एक स्केल है। उत्तर की ओर वरामदे पर बहुत सारी लडकिया अपना-अपना टिफिन बॉक्स खोल चुकी हैं। आपस में एक-दूसरे को पूडिया, पराठे-कचौडिया, सूखी सब्जी दे-देकर खाने लगी हैं। कोई मुस्कराती है, कोई खिलखिलाती है, कोई अपना कुरता सभालती है, तो कोई दुपट्टा। पूर्वी चुपचाप दीवार से सटी खड़ी है। वह इधर नहीं देखती। वह यो ही, शायद निरर्थक ही, उचक-उचक कर दीवार के उस पार खड़े ताडवृक्षो को देखती है। फिर स्केल से अपनी बायीं हथेली को ठोकने लगती है। हल्की गुलाबी, कोमल, प्यारी हथेली।

मामूली छोट की फ्रॉक, लट्ठे की सलवार, पैरो में हवाई चप्पल। चप्पल का दाहिने पाव का फीता उखड गया है। उस फीते को उसने शायद दो आलपिनो से फसा रखा है। दिवाकर मलिक की बेटी है न। लगता है, उनका ही सौन्दर्य लेकर धरती पर आई है। वैसा ही मनोहर रूप, वैसा ही नयनाभिराम मुखडा। एक पतली-सी चोटी पीठ पर झूम रही है।

उत्तर के वरामदे में दो लडकियों के साथ नाश्ता करती हुई मीना की नजर उस पर पडती है। मुह से फूट पडता है, "हाय! पूर्वी उधर चुपचाप खड़ी है।"

दूसरी लडकी कहती है, "उसे बुला लो।"

मीना पुकारती है, "अरी पूर्वी, वहा क्या कर रही है? इधर आ, इधर। पूर्वी, ओ पूर्वी!"

पूर्वी शायद सुन नहीं पाती। उसकी गर्दन जरा हिलती है और वह फिर उचक-उचक कर ताडवृक्षो को देखने लगती है।

तीसरी लडकी मीना को टोकती है, "छोडो, बन रही है। दिवाकर मलिक की बेटी है न 'कत्यक नाच'।"

दूसरी लडकी कहती है, "दिवाकर मलिक का बडा नाम है। एक बात तुम नहीं जानती न? पूर्वी भी वायलिन बजाती है।"

तीसरी लडकी हलवे के साथ आधी कचौडी मुह में डालती हुई कहती

है 'बजाती होगी। यही तो खन्सा है इन लोगों का।'

पूरे अहाते में सड़कियां आ-आ रही हैं। आतावरण जैसे बूझ रहा है। स्टाफ कम में शिक्षिकाएँ जसपान कर रही हैं। वहाँ भी अभी है, खिसलिसमाहट है साबिया की सरसराहट है।

उधर ताड़बूसों पर तीन-चार कौए आकर बसब-बसए बैठ जात हैं। पूर्वी उन्हें भी निहारने सबती है। पहले एक कौआ अपने पंख फड़फड़ाता है फिर दूसरा और तीसरा-चौथा। डूमरा कौआ अपनी आब में आन बाने पैर को कुचमाने सबता है। फिर सिर उठाकर पूर्वी की आग देजता है—कहीं इस सड़की के हाथ में डसा तो नहीं है? उसकी सका का समाधान नहीं होता और वह उबकर भागता बसा जाता है, भागता बसा जाता है।

बष्ठी टपटना उठती है। सड़कियां कलारों की आर धामती है। पूर्वी भी धीरे-धीरे बलती हुई बर्ग में आकर अपनी बयह पर आ बैठती है।

दस्तक ! वार-वार दस्तक ! !

दिवाकर मलिक की बैठक के द्वार पर दस्तक ! ! !

न जाने किम जमाने में यह सोफासेट यहीं पड़ा है। उस ओर मध्यम आकार की एक चारपाई के बीच में काफी जगह बच जाती है। दरवाजा दक्षिण की ओर खुलता है। दीवार पर देवी-देवताओं के चित्र टगे हैं। बाकी सब कुछ साफ-सुथरा है। विजली का मैन मीटर बैठक में है—दरवाजे से सदा बायीं ओर—फर्श से लगभग सात फुट ऊपर। उस पर धूल जम गई है और मकड़ी ने अच्छे-खासे जाल बना रखे हैं। इस बैठक में पश्चिम की ओर एक दरवाजा खुलता है, जिससे भीतर आगन में आया-जाया जाता है। सोफासेट इसी दरवाजे से उत्तर-दक्षिण दिशा में लगा है। अतिथि आते हैं, तो वे अक्सर इसी सोफे पर बिठाए जाते हैं। उनका चेहरा पूर्व की ओर होता है और वे शरारतन भ्रुकना चाहें, तभी आगन में भ्रुक सकते हैं, अन्यथा आगन में फुदकती गौरैया तक उन्हें नजर नहीं आ सकती।

सोफे पर लगे सारे कुशन न जाने कब इस लायक हो गए कि इस्ट-विन के हवाले करना पड़ा। अब कुशन की जगह उनकी नाप की दरी काट-काटकर बिछी है। पूर्व की ओर दीवार से सटी एक छोटी-सी मेज है, जिस पर न तो ऐशट्रे है और न कोई गुलदस्ता। हा, एक चीज जरूर हमेशा देखी जाती है—शुभ्र पापाण के मुरलीधारी बालकृष्ण। यह छवि बेहद प्यारी, न्यारी, मनोहारी है।

दमयन्ती या पूर्वी इस बैठक को फूलझाड़ू से रोज दो बार बुहारती हैं। पहले यह काम कल्याणी और वागेश्वरी के जिम्मे था। बैठक सदा स्वच्छ-सुहानी बनी रहती है। पूर्वी प्रत्येक प्रातः-सन्ध्या बालकृष्ण की मूर्ति के सामने एक जलती हुई सुगन्धित धूपबत्ती जलाकर खोस जाती है। पूरी

बैठक मुग़ प्रायमान हो जाती है। बैठ जाने का भी करना है महरो मान सने का मन करना है।

द्वार खुल गया।

सिर के आंचल को और भी व्यथित करते हुए हमयन्ती ने कहा "भाइए।

बागन्तुक ने चौकट के आस पास डायते हुए कहा "नमस्ते। मेरा नाम मनोहरसाल है।

"अच्छा।" ठंडा-सा स्वर हमयन्ती का।

"दियाकर भलिक है घर में? मनोहरसाल ने लड़े-लड़े पूछा और हमयन्ती की रूपराशि को देखकर अकित रह गया।

सूखते हुए गुलाब में इतनी सुगंध?

तारे चन्द्रमा से छोटे नजर आत है मगर कहत है उनका आकार पन्द्रमा से कई गुना अधिक होता है। मामूली-नी सफेद साड़ी साड़ी की हस्की गुलाबी जिन्दापी। योपी-गोपी कलाइयों में काली-काली नहीं लाल लाल बुड़ियाँ। पर, हमने क्या? साम मनिया आखिर लाल मुनिया है।

मनोहरसाल अपने मन में उल्लूक हुए विकार से लड़ने लगता है कि हमयन्ती आंगन की ओर कुसने वाले अरवाजे की ओर खिनकती हुई बोली "बैठ आइए, लड़े क्यों हैं?"

मनोहरसाल जैसे संसकोच बैठ गया।

हमयन्ती ने पूछा "आप कहाँ से आ रहे हैं?"

"मीना बाजार से।

"मीना बाजार से?"

"जी हाँ।

"क्या काम है भलिक जी से?"

मनोहरसाल ने जैसे बड़ी जल्दी में कहा "दियाकर भलिक दुम्न जागत है। मीना बाजार में मेरी दो-दो दुकानें हैं।"

"दो-दो दुकानें?"

"जी हाँ। एक कपड़े-माड़ियों की और दूसरी ज्वेलरी की। मगर मैं कपड़े वाली यही पर ही बैठता हूँ। ज्वेलरी वाली यही पर बड़े भाई साहब



F-3400
3420

वैठले हैं। दिवाकर जी उधर से गुज़रते हैं, तो बराबर 'जय रामजी की' होती है।"

चतुहरेवाले कमरे में चुपचाप लेटे हुए दिवाकर मलिक की आँखें खुली हुई हैं। परेशान आँखें जैसे नींद से झगड रही हैं। दिवाकर मलिक ने कान बड़ा कर सुन लिया है कि यह आवाज़ मनोहरलाल की ही है। सम्पर्क, मंत्री और उन नगण्य स्थितियों की स्मृतियाँ मानसपटल पर उभरने लगी हैं, जिनमें दोनों ने एक-दूसरे को 'जय रामजी की' है।

"अच्छा, अच्छा।"

मनोहरलाल ने कहा, "आपको मालूम ही होगा कि शहर के इस इलाके में न तो एक पार्क है, न बगीचा और न तालाब। हम लोगो ने सरकार के यहाँ दरखवास्त लगाकर एक शानदार तालाब खुदवा लिया। बगल में एक पार्क भी बन कर तैयार हो चुका है। बीच में खुला हुआ स्थान और चारों ओर रगविरगे फूलों की क्यारियाँ। क्या बतलाऊँ आपसे, तालाब के नीचे से एक नम्बर का पानी निकला है। आज बीच में लाट भी गड गया। तीन ओर घाट बन चुके हैं। एक ओर का बाकी है। हम लोगो ने तय कर लिया है कि तालाब और पार्क की सफाई में कोई कमी न रहने पावे। समिति के एक मेम्बर ने चाहा था कि एक घाट धोवियों के लिए छोड़ दिया जाए, मगर मैंने कहा ऐसा नहीं हो सकता। तालाब के किमी घाट पर धोवी क्या, धोवी का गदहा तक नहीं नज़र आना चाहिए। अब खुशी की बात यह है कि मिनिस्टर साहब तालाब का उद्घाटन करने को तैयार हो गए हैं। आज मंगलवार है न ..?"

"जी।"

"उद्घाटन शुक्रवार को होना तय हुआ है।"

"तालाब की पूजा भी तो होगी न?" दमयन्ती ने सहज भाव में पूछा।

"जी हाँ, पूजा तो होगी ही। मिनिस्टर साहब खादी की जाधिया पहन कर तालाब में छलाग लगावेंगे।" मनोहरलाल ने बतलाया।

दमयन्ती के मुँह से निकला, "भाई साहब, तब तो आपको शहर के किसी अच्छे तैराक से उद्घाटन कराना चाहिए।"

मनोहरलाल ने असहमतिसूचक स्वर हिलाते हुए कहा, "ठीका महरे पानी में तैर सकता है फण्ड तो नहीं वे सकता न।"

'अच्छा अच्छा' आप इनको किसलिए तलाश रहे हैं ?

'हमने मुख्यर की रात पार्क में एक बृहत् सांस्कृतिक प्रदर्शन का आयोजन किया है। जैसे तो और भी कई आर्टिस्ट हैं मगर दिवाकर जी के मुकाबल का आंसर कोई नहीं है। इनके दो मूल्य पूरे समारोह के लिए बहार बन जाएंगे। मिनिस्टर साहब भी मान करेंगे कि किसी फंडेशन में जाने का मौका मिला था। क्या व्यापारी और क्या नौकरी पेरो वाले सभी इस बात पर एकमत हैं कि दिवाकर जी ।"

रमवन्ती ने एकाएक पूछ लिया "ठीक है इसके लिए आप लोगों ने इन्हें कितना देने का विचार किया है ?

बौहरी और बजाब—मनोहरलाल की नस-नस में जैसे आश्चर्य की सहर ढीढ़ पड़ी। रमवन्ती के इस प्रश्न ने जैसे उसे आहत कर दिया फिर भी उसने अपने को नियंत्रित करते हुए कहा आपने तो पत्र का सवाल कर दिया मुझसे। दिवाकर जी होते तो शायद कुछ भी मान जाते। यह तो समाज की सेवा है। इसमें लेनदेन का मामला कहा जाता है ? क्या आप उस तालाब में स्नान नहीं करेंगी क्या घर की चाहरदीवारी से आपका मन ऊबेगा तो आप उस पार्क में आकर नहीं बैठेंगी ?"

रमवन्ती ने कहा "यहां से काफी दूर पड़ता है वह तालाब और वह पाक।

'बैट, कभी जाइया। मैं कम निमग्नबपत्र भी भिजवा दूया। पार्क की तो हम लोग ऐसा सजाएंगे कि वह इन्द्र भगवान का बपीचा बन जाएगा। मनोहरलाल कहता रहा, 'आप तो जब एक महान और महा-हुर आर्टिस्ट की 'बो' हैं। इसलिए आपको यह नहीं बतलाना होता कि कसाकार जैसे को पाब की दून समझता है। और ऐसी स घना किसी कसाकार का सम्मान किया जा सकता है ?"

ये शब्द जब कानों में पड़े तो दिवाकर मलिक की आत्मा जैसे पीछ उठी 'ठीक कह रहे हो मनोहरलाल। कसाकारों के गले में सिर्फ मालाएँ डालनी चाहिए। एक-दो नहीं दर्जन दो दर्जन पचास ही। यानी

इतनी मालाए, कीमत कम हो तो बेहिसाब, कि उनकी गर्दन टूट जाए। जिन्दा ही उन्हें प्रेत बना दो। प्रेतों को न तो मकान चाहिए, न कपड़े, न खाना, न दवाएँ। प्रेत लावल्द होते हैं न। इसलिए उन्हें बाल-बच्चों की माया भी नहीं मताती, फिर वे किमका भविष्य बनाने के लिए कुछ जोड़ना-बटोरना चाहेंगे ?'

दमयन्ती का स्वर धीमा पड़ गया। बोली, "मेरी समझ में एक बात नहीं आती कि समाज कैसे यह मोच लेता है कि सिर्फ़ ना-पचान लोगों को भीड़ जमा करके कलाकार के गुणों का बखान कर देने-पर से उनकी नारी समस्याओं का हल निकल जाएगा ? आखिर कलाकार भी तो समाज के बीच का ही एक इन्तान होता है। मेरे घर में पन्द्रह-बीन दुपट्टे पड़े हैं। वे स्वागत नमारोहों में इनके कंधे पर डाले गये थे। क्या आप उन दुपट्टों के बदले एक हजार रुपये दे सकते हैं ? कहिए, तो मैं निकाल लालू। हजार रुपये में मेरी कई समस्याएँ हल हो जाएगी।"

मनोहरलाल बड़े पनोपश में पड़ा। उसने सोचा, औरतों से जवान लड़ाना ठीक नहीं। बोला, "यह काम तो किसी फुर्मत के समय किया जा सकता है। देखना होगा कि दुपट्टे मचमुच निल्क के हैं या टनर के। वैसे भागलपुरी रेगम के कपड़े के भी अच्छे होते हैं। अभी तो मैं जल्दी में हूँ। आप कृपा कर मुझे उनसे मिलवा दीजिए।"

"वह तो घर में नहीं है।"

"नहीं है ?"

"ना।"

"आपने पहले क्यों नहीं बतलाया ?"

"हम लोग दूसरी-दूसरी बातें करने लगे न।"

मनोहरलाल उठ खड़ा हुआ और बोला, "बैसे आए तो कह दीजिएगा। मुझे अच्छी तरह जानते हैं। मैं कई बार उनके काम आ चुका हूँ। एक बार बाजार में रुई गायब हो गई थी। दिवाकर जी बड़े परेशान थे। आरती की बत्ती बनाने के लिए उन्हें थोड़ी रुई चाहिए थी। मैं खुद उनके साथ मागीलाल के पास गया। मेरे कहने पर मागीलाल ने सौ ग्राम रुई दे दी थी। पैसे अपने पास से यह देने लगे। मैंने रोक दिया। फिर तो मागीलाल

को भी निहाज हो आया।

दमयन्ती चुपचाप सुनती रहीं।

उधर बबूनरे पर सेटे हुए निबाकर मसिक ने भी यह बात सुनी।

मनोहरनाम एक कसाकार के प्रति बरती गई अपनी उदारता का एक और सच्चा किस्ता कहता रहा बहुत मान गुजर गए। निबाकर बाबू मीनाबाजार की सड़क पर चक्कर लगा रहे थे। गमियों के दिन थे और सब बाखू बज रहे होंगे। मैं अपनी गद्दी पर था। नजर मिली तो मैंने कीरन बुला लिया। वह परेदान नजर आए। एक ओर कोने में से आकर पूछा तो मामूम हुआ कि एक कर्णफूल पर पचास रुपए उधार चाहते हैं। मुहल्ले में आज क मारे किसी से कहत नहीं बन रहा है। मैंने समझाया—'महाराज गिरबी रकी हुई चीज मुक्ति से कोई छुड़ा पाता है। पचास रुपए में सोने का कर्णफूल हाथ से निकल जाएगा। इसे बच ही डालिए। मेरी बात मान गए। मैं अपने भाई साहब के पास निबा से गया। मैंने एक ही छियालीस रुपय न किता छतह कर लिया। दूसरा दुकानदार मेरे जयान से एक ही तीस से एक छत्राम बचावा नहीं देता।

दमयन्ती ने कुछ स्मरण करत हुए कहा "जी हां अब पाब मा रखा है। धर लौट कर आए, तो कहने लगे कि मीनाबाजार में बड़ी देर तक चक्कर-दर चक्कर लगाता रहा। साहस ही न हो कि किसी दुकान में घुमूं। एक मित्र मिल गए। उन्होंने ही अपने भाई के हाथ कर्णफूल बिकवा दिया।

'जी हां वह सबक मैं ही हूं मनोहरनाम।

'आपका महसान भूलते नहीं थे।

'क्या अब भूल चुके हैं ?

'मुझे तो ऐसा ही कुछ समता है।'

'नहीं नहीं ऐसी बात नहीं। कसाकार इतने अकृतज्ञ नहीं होते।'

दमयन्ती बोस पड़ीं "हां यह तो।"

मनोहरनाम को जया जैसे दमयन्ती ने व्यंग्य कहा हो। पूछा "क्या आप कुछ और कहना चाहती हैं क्या ?

'जी नहीं और कुछ नहीं।'

मनोहरलाल ने अपने कदम चौखट से बाहर करते हुए कहा, “अब चलता हूँ। ज़रा कह ज़रूर दीजिएगा। वैसे छपा हुआ निमन्त्रणपत्र ज़रूर आवेगा। क्या कहूँ, स्टेज पर आगे की सीटों पर सिर्फ़ अफसरों और उनकी वीवियों के बैठने का ही इन्तज़ाम हो सका है। आप भी चाहें, तो आ सकती हैं। दायी ओर दरी पर महिलाओं के बैठने का प्रवन्ध है। आपको हम वही बिठा देंगे। अच्छा, नमस्ते। ज़रूर-से-ज़रूर कह दीजिएगा। यह समाज की इज़ज़त का सवाल है • ।”

दमयन्ती ने इस बार कुछ नहीं कहा। चुपचाप आगे बढ़कर दरवाज़ा बन्द कर दिया। चबूतरे पर लेटे हुए दिवाकर मलिक ने मनोहरलाल की आखिरी बातें सुन ली थीं। वह जैसे फुसफुसा पड़े, ‘कलाकार तो समाज की इज़ज़त बचाये और समाज कलाकार को निर्जीव खिलौना समझे • ।’

अतीत के अनगिन परस्पर अगम्यद्वय विना बिनाकर मसिक के दृष्टि
 सरोवर में रँध रहे हैं। नर म अग्न का एन याना नहीं। समझ में नहीं
 आता कि किसने पास जाए, कहाँ से कुछ जाए। फिर मुस्ती जाती है। मुस्ती
 आधी माद का रूप धारण करती है और साइट ऑन-ऑफ होने समती है।
 ह्याय कितना कुछ खोकर कोई कसा का लाइला-मुलाय बन पाठा है।
 कभी पड़ोस के सामाजी ने इसी दरवाजे पर हांक लगाकर कहा था "मुन
 लो दीदी बिबाकर मेरी बात पर ध्यान नहीं दे रहा है। हम-तुम तो पके
 हुए फल ठहरे, जाने अब बाकी से टपक पड़ें। अगर, तुम्हारा यह छोका
 जो बालकृष्ण बना फिरता है कही का न रहेगा। अब बायस्कूप भा गया
 है। उसमें दूसरे प्रकार के नाच होते हैं और लोग उन्हें ही पसन्द करत हैं।
 अब नाच पर जो अतान के बोन बोले जाते हैं उनका जानन्द सने बासा
 बूड़े न मिसेमा।

बूडा म्पामा ने दरवाजा खोल दिया था और बूषट की ओट से कहा
 था 'बैठिय, सामा सेया।

और उधर पीछ के कमरे में किशोर बिबाकर मन-ही-मन कुछ माद
 कर रहे थे कुछ बुदबुदा रहे थे रट रहे थे। पाँवों में जैसे बिरफन सिमटी
 चली आ रही थी

स्वामी

'ता बेई, ता येई तत आ बेई ता येई तत।

धिन ना धिन धिन ना तिम ना धिन धिन ना।

अन्तरा

'ता बेई ता येई तत एक-दो-सीम एक-या येई येई तत।

धिन ना धिन धिन ना तेटेकतकिन तेटे धिन धिन ना।

एक बायाँ पैर, दो बायाँ पैर।

बिबाकर धुंधल बांध सेते हैं, फर्न पर उतर जाते हैं, फिर

‘ता थैई, ता थैई तत •’

लाला ने जैसे श्यामा को एकदम मे दीन-दुनिया का दर्शन कराते हुए बतलाया, “हमारे देश मे तुम्हारी जाति के लोग लाखो साल पहले से जप-तप, यज्ञ, पूजा-पाठ करते-कराते आए हैं। इसमे भला किस बात की हेठी ? वगीचे वाले महन्त जी ने चेला बनाने की खबर भिजवायी थी, मगर तुम्हारे यहा से टाल दिया गया। तुमने तो सुना ही होगा कि उमके बाद महन्त जी पखवाड़े-भर भी न बचे और सुग्गन राय का लौडा चेला बनकर लाखो की जायदाद का मालिक बन गया। खैर, गया हुआ वक्त कब हाथ आता है ? परसो मे श्री लक्ष्मीनारायण मन्दिर के पुजारी भगवान के यहा जाने की तैयारी कर रहे हैं। मुझसे इशारा कर कहा कि दिवाकर को बुला दो, उसे अपना स्थान सौंप दू। सो यह अन्तिम अवसर है। जानती हो, मन्दिर के नाम पर वार्डम वीधा खेत है और मन्दिर मे भला क्या खर्च है ? चढावे ही इतने चढते हैं कि मत पूछो। मेरा विचार है कि दिवाकर नहा-धोकर चले ओर पाच लोगो के सामने उनसे तिलक करा ले। मन्दिर की देख-रेख मे भला क्या रखा है ? भक्तजन आते हैं और सारी सफाई कर जाते हैं। घण्टी डुलाने-भर से ही पेट भर जाए, तो काया डोलाने की क्या जरूरत ? दिवाकर घर मे है कि नही ?”

“अभी था तो ।”

लाला बोले, “छोडो, मेरे सामने तो पढाये-सिखलाये हुए तोते की तरह ‘हा हा’ करेगा और जहा मैंने उस ओर पीठ फेरी कि ‘ता थैई तक थैई’ के वश मे आ जाएगा। तुम उसको समझाना। अभी वच्चा है, बात मान सकता है। कच्चे घडे को तोडकर छोटा-बडा बनाया जा सकता है। पक जाने पर तो एक ककडी तक की चोट नही सह सकता। मेरे दादा कहा करते थे—पढो बेटा चण्डिका, जिसमे चढे हण्डिका। हम तो वनिया ठहरे। वचपन से ही डाढी मारना हमने न सीखा होता, तो आज जो कुछ देख रही हो, वह सब नही होता। गाना-बजाना और नाचना रोज-रोज रोटी देने वाला इल्म नही है हा। तुम मा ठहरी उसकी। समझाओ। और जो राजी हो जाए, तो कहना मामू के पास चले जाओ। मैं सारा अनुष्ठान शाम तक पूरा करा दूगा। तुम तो कई वार उस मन्दिर मे हो

आई हा। पूजा-पाठ के लिए कहीं फूम तक खोजन नहीं जाता पड़पा। मन्दिर के अहात में ही पिछवाड़े की और फुलबाड़ी है। हर यह कि कपास के भी तीन पीघे हैं। रात उमस भय कोये फटते हैं और बुध-भी कपास उमस निकसती है। कोई भक्त भी वे जाता है कोई भक्त धूस दे जाता है।”

मगर सेट किया हुआ पासा जैसे मीने पर घोसा दे गया। दिवाकर हम रात-रात क र्मभ्र से मुक्ति पाने के लिए मृत्य के परागा के द्वार बुहास्ते रह और छह सात बाघ लौटे। ब्यामा सूख कर आधी हा यह। बीसे आधी भी न बचती अमर दिवाकर पत्र न भेजते रहत। पेट से बड़ा बाण्डाल तो कब्रिस्तान का कदखोदा तक मझी होता। ब्यामा एक बकन पकातो और दानों बकन छापीं। पर की रही-सही बोड़ी मकह पूजी भी जाती रही। साम को दरवाज से बाहर निकलकर लड़ी होती और उम्मीद करतीं कि किसी और से दिवाकर आ निकसेगा। लेकिन यह मन तो बड़े-बड़ ज्ञानियों को छल सेता है साधारण लोग यदि इससे छले जाते हैं तो ममा क्या आश्चर्य ?

सैंकड़ो मीटर फिल्म जैसे देखते-देखते खिसक जाती है।

पत्नी-रूप दमयन्ती आती है। दो साल बाद मा बनती है। इसके पन्द्रह दिन पहले दिवाकर कलकत्ता से लौटे थे। सात सौ रुपये ले आये थे। जिसने इनका नृत्य देखा, मुग्ध हो गया। सोनार देश बगाल की नर्त-किया चकित रह गईं। दिवाकर जैसे समारोह के हीरो बन गए।

कन्या ने जन्म लिया, तो माना गया कि घर में लक्ष्मी आई है। इस लिए छोटा-सा बढिया नाम रखा गया—कल्याणी। और एक और रील जब घूम गई, तो पता लगा कि कल्याणी की उम्र बीस साल हो गई। इसके अलावा बागेश्वरी और पूर्वी।

कहा चले गए वे दिन ?

जा रे जमाने, तू कितना बदल गया !

सुगन राय का लडका महती के साथ-साथ पाच-पाच रखैलो को भी सभाल रहा है। सम्पत्ति में फुलावट आ गई। महाजनी का कारोबार भी चलता है। चार-चार मुशी खाते सभालते हैं। एक कारिन्दा कचहरी में चक्कर लगाता रहता है। नाज़िर से मिलकर वही जब्ती-कुर्की का कागज तैयार करवाता है। धर्म के लम्बे-चौड़े मैदान में अधर्म चौका-छक्का लगाता है। सुगन राय का लडका बराबर सिर मुढाये रहता है और गेरुए रंग का कुरता पहनता है तथा साफा बाधता है। लक्ष्मीनारायण मन्दिर के पुजारी जी सचमुच मर गये और रामपूजन ने उनका स्थान ले लिया। बाईस वीधे की खेती बयालीस वीधे में बदल गई। उसके लगातार तीन बेटे हुए। सबसे बड़ा मजदूरों की सहायता से खेती करता है और अनाज बेचकर नोटों की गड्डिया घर में लाता है। दूसरा वाला मैट्रिक पास करके डिस्ट्रिक्ट कोर्ट में किरानी बन गया है। पडोस की कुम्भकारपुत्री के इश्क में फस गया, तो एक रात उसे उढाकर कहीं ले गया और मन्दिर में शादी करके लौटा। तीसरा पुत्र पढता-लिखता नहीं। पूर्वी की उम्र का है।

नुरख पर हमेशा चाय की बूकान में मखर आता है। कभी-कभी सभ्नी मारयण के मन्दिर में स्मूटी बना देता है और जेबवर्च-भर आसानी से निकाल सता है।

बाईस बीघे महीं जमाव अब बयालीस बीघे।

रामपूजन पता नहीं भीतर-ही भीतर कुड़ते हैं या नहीं मगर बाहर से बेटों के बारे में मीन रहा करते हैं। यदाकदा दिवाकर मसिक से भेंट हो आया करती है। समयन्ती क साब मन्दिर में इधर कई बार कल्याणी को देला है। एक बार दिवाकर मिल गए, तो पूछ लिया "बड़ी बानी क लिए कही टोह स रहे हो ?

दिवाकर बोले "हां मगर इहेज की रकम माइ आती है। वह जमाना भी तो अब नहीं रहा जब कभी इस सहर, कभी उस सहर से जुसाव आया करते थे।

"तुम ठुक में ही चलती कर गए, दिवाकर ! रामपूजन ने ममझते हुए कहा "ममापुर के बाबू साहब तुम्हें अपने यहां रखना चाहते थे। रह जाना चाहिए था। बंधा-बघाया भोजन-वस्त्र और कुछ माहवार भी मिलता रहता। उनसे ही आज्ञा लेकर इधर-उधर का भी चक्कर लगा आते। कितने धुपक बांध आते होमे तुमने ! भनकार से भसा पैसे वहां रुकत हैं मसिक ?

"हां मैंने यह बसती की। दिवाकर मसिक ने बड़े बेमन से कहा।

रामपूजन से असग होने पर दिवाकर मसिक को एक और बात याद आई। रट रटाकर मेट्रिक पास कर लेना चाहिए था। महिला कालज के लेडी प्रिंसिपल की ओर से विज्ञापन निकला था—एक नृत्य प्रधिक्षक चाहिए। सैलनिक योग्यता कम-से-कम मेट्रिक पास।

मीका बात ही आबमी कैसा हो जाता है ?

ऐसे कई अवसर आए थे, जब दिवाकर के नृत्य देखकर प्रिंसिपल श्रीमती जोशी आनन्द से अभिभूत हो गई थी। रहा नहीं गया था पास आकर उन्होंने कहा "शुब ! आप हम भोगों के लिए दीरवपुस्य हैं। हमारे 'उनको' भी संगीतकसा से बहुत प्रेम है। कभी हमारे, यह पधारिये।"

“आऊगा, अवश्य आऊगा।”

“आइए, हमारा मौभाग्य होगा।”

किसी ने यह नौकरी पकड़ लेने की बात सुझायी, तो बड़े खुश हुए ॥ याद आया, श्रीमती जोशी उनकी प्रणसिका हैं। वह जानेंगी कि मैं यह पद चाहता हूँ, तो फौरन रख देंगी। प्रार्थनापत्र टाडप करवाया और मोचा— पहले चलकर श्रीमती जोशी को दिखला लूँ। इण्टरव्यू के तो अभी पन्द्रह दिन शेष हैं।

शाम के लगभग छह बजे उनके घर पहुँच गए। बायीं जेब में प्रार्थना-पत्र था। खबर देने पर एक नौकर ड्राइंग रूम का दरवाजा खोल गया। बोला, “बैठिए, अभी आती हैं।”

प्रवेश कर कोने में रखी हुई कुर्सी पर शान्त-सहज भाव में बैठ गए थे। वे ही सदावहार घुघराले बाल, गौर मुखमण्डल, आखें ऐसी, जैसे कमल का कोया आधा फटा हो। कोमल-कोमल हाथ, कोमल-कोमल पाव ॥ पतले-पतले अधरो के पीछे धवल दत्तपक्तियाँ।

एक नृत्य का भाव जैसे आ खड़ा होता है।

कृष्ण पहले से यमुनातट पर कदम्ब की छाया में खड़े, वशी लिए राधा की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जल भरने के लिए उधर में राधा आ रही हैं। कृष्ण पर दृष्टि पड़ते ही रुक जाती हैं। आनन्द और लज्जा से आखें फैलती हैं, फिर पलकें झुक जाती हैं। समझ रही हैं कि कृष्ण ने उन्हें देखा नहीं। मन-ही-मन फैसला करती हैं, भाड़ी की ओट में छिप जाना चाहिए। सिर ने कलश को उतारकर कमर पर रखती हैं, फिर बाएँ हाथ में कृष्ण की ओर इशारा कर भाड़ी में घुसने लगती हैं। पर, कृष्ण सारे खेल चुपके-चुपके देख गए। सिर यो हिला, जैसे कह रहे हो, मैंने देख लिया, कहा जाओगी मुझमें छिपकर ?

दिवाकर कृष्णरूप धारण किए यह नृत्य प्रस्तुत कर रहे थे। सो, भावानुरूप मुस्कराए। धवल दत्तपक्तियों की शोभा दर्शकों की आँखों में नहीं, दिलों में समा गई।

हाय रे, दिवाकर मलिक !

सच बतलाना, राधा का नटवर नागर कोई और था, या स्वयं

“क्या आपका अपना लडका है ?”

जैसे कलेजे पर पत्थर रखकर दिवाकर मलिक ने कहा, “जी नहीं, यह नौकरी मैं खुद करना चाहता हूँ।”

श्रीमती जोशी को बड़ा आश्चर्य हुआ। बोली, “अरे, आप यह क्या कह रहे हैं ? यह नौकरी आप करेंगे ? आप इतने बड़े कलाकार हैं। क्या कहेंगे लोग ? आपकी क्या कोई मामूली प्रतिष्ठा है ?”

दिवाकर मलिक ने कहा, “मैं सच कह रहा हूँ। मुझे यह नौकरी चाहिए। नौकरी आखिर आदमी ही करता है। लोग क्या कहेंगे, मैं इसे सुनने नहीं जाऊंगा। तारीफ में कुछ या ज्यादा कहना जवानी होता है, इसलिए लोग इसमें सकोच नहीं करते। आप मेरे लिए कर दीजिए। दो लडकियां ब्याहने योग्य हो गई हैं। वही कृपा होगी आपकी।”

श्रीमती जोशी जैसे कुछ और सभल कर बैठ जाती हैं।

“आपने नृत्य की कौन-कौन-सी परीक्षाएं पास की हैं ?”

“परीक्षा तो नहीं पास की।”

“तब कैसे काम चलेगा ?”

“मैंने जनता के सामने परीक्षाएं दी हैं।” दिवाकर मलिक याद कर-कर के कहने लगे, “मुझे दो-दो बार राष्ट्रपति ने पुरस्कृत किया है। ग्वालियर के अखिल भारतीय मगीत सम्मेलन में।”

श्रीमती जोशी ने बीच में ही टोका। श्रद्धा का स्थान समताने ले लिया। बोली, “भाईजान, सब ठीक है। आपको पुरस्कार में कुछ रुपये मिले होंगे, शाल मिली होगी, तावे की पट्टिका पर खुदे हुए कुछ अक्षर मिले होंगे। आपको माला भी पहनायी गई होगी। मगर, राष्ट्रपति जी ने आपसे यह कभी नहीं पूछा होगा कि आप किन समस्याओं में घिरे हुए हैं। आपके लिए बतलाइए, क्या किया जाए ?”

“जी हा जी हा ऐसा कुछ नहीं पूछा गया।”

“तो फिर ?”

दिवाकर मलिक बोले, “मेरा मतलब यह है कि मैं जिन वच्चियों को नृत्य सिखलाऊंगा, वे सीख-पढ कर आखिर अपने नृत्य-प्रदर्शन जनता के सामने ही तो करेंगी ?”

‘भाईजान आप बेहद मासूम जान पड़ते हैं। वे सड़कियाँ नृत्य का प्रदर्शन करने के बाद क्या करेंगी इसमें मुझे क्या वास्ता? कामेज में सड़कियाँ के लिए एक नृत्य-प्रदर्शन विभाग है और उसका प्रशासन मेरे हाथ में है। प्रशासन के लिए मुझे जो अधिकार और जिम्मेदारियाँ हैं उनसे न तो मैं एक इंच बायें खिसक सकती हूँ और न दायें। कहते हुए श्रीमती बोधी ने पूछ लिया ‘आपने कहाँ तक शिक्षा पायी है?’

बिबाकर मलिक ने उत्तर दिया ‘मैट्रिक का इम्तिहान दो बार दिया मगर दोनों बार फेल हुआ। मेरा मन तो नृत्य के बोसों में तोमा रहता था। मैंने सोचा मुझे तो नृत्य बनना है कर्नाटक की लडाईं कितनी बार हुई और हैदराबाद के निजाम आसफ़जाह के मरने के बाद बहादुर शाह तख्तनशीं हुआ इसे रटने से भला क्या होगा? आगे चल कर जो बनना है मैंने मारी शक्ति तमी में सपाना ठीक समझा। बिबाकर मलिक बड़े भोसपन से कहते गए, ‘मैं जिम विषय से नफरत करता था उसे पढ़ने और याद करने के लिए मुझे विषय होना पड़ता था। मसलन—भूगोल को ही मैं सीखा। सोना कहाँ-कहाँ पाया जाता है? यदि मैं ठीक-ठीक यह बात जान भी भू तो मेरी नृत्यकला को इससे भला कौन-सा लाभ मिल जाएगा? अब देखिए न जो छात्र मशीनों के तोड़ने-ओड़ने में रुचि लेता है उसे संस्कृत के छातुक्य पढ़ाने से क्या होगा? उसे तो सरकार को चाहिए कि ।

मैं तो एक ही बात मानती हूँ और वह यह कि सरकार कभी कोई प्रसती नहीं करती। इतने बड़े देवा को जलाती है यह कोई हसी-खेल का है नहीं। देखिए, विज्ञापन में साफ़ कहा गया है कि आवेदन की योग्यता कम-से-कम मैट्रिक पास होनी चाहिए और आप मैट्रिक पास हैं नहीं। इसलिए आपके आवेदनपत्र पर विचार भी नहीं किया जा सकता।” श्रीमती बोधी ने स्थिति को दोटक कर दिया।

बिबाकर मलिक जेब में रखा हुआ अपना आवेदनपत्र खोले ही रख गए। लेकिन एक बार फिर साहस करके बोले “नृत्य कक्ष में मेरी साधना तीस साल की है। इतनी मेहनत इतनी लगन से तो आदमी चार विषयों में एम० ए० कर सकता है।

श्रीमती जोशी मुस्करा पड़ी। बोली, “और मजे की बात यह है कि आप मैट्रिक भी पास नहीं कर सके। आप एम० ए० पास को नृत्य सिखला सकते हैं, मगर आफिसो में तो आप किरानी भी नहीं हो सकते। वहरहाल, मुझे अफमोस है कि इस मामले में मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकती।” फिर उन्होंने सुझाया, “आप चाहें तो टाइपराइटिंग सीख लीजिए और एक मशीन लेकर कचहरी में बैठ जाइए। भगवान चाहेगा, तो दिन-भर में रोज पन्द्रह-बीस रूपए मिल जाएंगे। इसका एक तरीका भी है। किसी चलते-पुर्जे वकील के सम्पर्क में रहिए। ये लोग रोज ही दस-बीस अजिया लिखते-लिखवाते हैं। मारी अजिया आपको ही टाइप करने के लिए दिया करेंगे।”

“अच्छा ..” बोलते हुए दिवाकर मलिक को जैसे पसीना छूटने लगा।

वेचारे आत्मग्लानि से भर आए। उठ पड़े। श्रीमती जोशी ने कहा, “बैठिए, नौकर पान ला रहा होगा।”

“फिर कभी.. फिर कभी...” कहते हुए हाथ जोड़ कर दिवाकर मलिक ड्राइंग रूम से बाहर निकले। बदले में श्रीमती जोशी ने हाथ नहीं जोड़े। सिर्फ ‘नमस्ते’ कह दिया। विदा करने के लिए फाटक तक नहीं आई। ड्राइंग रूम से एक दरवाजा भीतर की ओर खुलता था, उसी से चुपचाप भीतर चली गई।

कृष्ण नौकरी के लिए आया था और उस नौकरी के लिए अपेक्षित योग्यताओं में से मुख्य योग्यता यही नहीं थी कि वह मैट्रिक पास हो। राधा बदल गई, जो एक वार मन-ही-मन क्षण-भर के लिए इस कृष्ण को मंच पर मुस्कराते देख कर राधा बन गई थी।

वक्तियों से शहर की सड़क चकाचौंध थी। अगल-वगल की दुकानें चमक रही थी। लोग आ-जा रहे थे। साइकिल, टमटम, स्कूटर और मोटर-गाड़ियों की रेलपेल मची थी। इतनी बड़ी दुनिया में दिवाकर मलिक देख रहे थे कि उनका स्थान कहा है? मुल्क के भूगोल में भला यह कहा पढाया गया था कि हमारे मुल्क में फला कलाकार फला शहर में पाया

जाता है। चाहेवार को मामूम रहता है कि उसके इमारत में कौन गुफा कहाँ रहता है। किस स्थिति में रहता है। मुझों अपराधकर्मिया की समस्त स्थितियों से यह प्रशासन तन्त्र अवगत रहता है। मगर क्या और संस्कृति ने चौकीबारो की कोई भी सूची इस मुक्त के भूमीम में नहीं छापी जाती।

बहुत सफावट का अनुभव हो रहा था। बच कर एक चाय की सामुसी दुकान में जा बैठे। दुकानदार क नीकर में पूछा "क्या है?"

"चाय।"

"चाय के साथ कुछ और?"

"नहीं सिर्फ चाय। सोसे। यह चाय अनिच्छापूर्वक पीती थी।"

बैठे, तो बैठ गए। आलों के सामने एक विपान महसूस उभर आया।

इसी महसूस में जनतन्त्र का पहरेदार रहना है—नवम बड़ा "दुर्गम"। मगर, साधारण जनता इस महसूस के अहान में रुचम रचन का माहम नहीं करती। इस महसूस में एक इतना बड़ा पदा है, जो अरुण मुक्त की बन्धन विक्रम तस्वीर को बक देता है। यहाँ की रीतक पूरे मुक्त का गैलरी नहीं है। इस घर की मड़कें जहाँ यह महसूस है, पूरे मुक्त की मड़कों में भवहरा घाल रखती हैं। इन सफा पर न ता तम हुए कात्मिक फेरे जान है और न कोई बाह्य या छुपन न ही शरीर में-बाह्य का महसूस करने का विषय होता है, बस हुए कोत्मिक कदुकड़ बगान जान है। "निश्चय" मसिक का पुरस्कार में तीन-तीन कागज मिन बुर है। बर्न पर इन्ने बस में। एकाएक जैसे कस्मानी सामने आकर दूठ बिरु है "कन्" की मरे हाथ कर पीम कराय? "आगिर में भी बिन्दु बंगन हु।"

नाटक पूरे वेग में चल रहा है। सारे-के-सारे दर्शक पहले की ही तरह आंखों पर पट्टी लगाए हुए हैं। ये सभी शुद्ध कला के प्यासे हैं। लगता है, इनके होठ सूख रहे हैं। जीभ की सम्पूर्ण तरलता चुक गई है। अब होठों पर जीभ फिराने से कुछ नहीं हो रहा है।

परदे के पीछे से मशीन की आवाज़ सुनायी दे रही है। शायद उसके पहिये पूरे वेग में नाच रहे हैं। मौसम ठण्डा है या गर्म, इससे पहियों को कोई मतलब नहीं। उन्हें कौन चला रहा है, उन्हें इसका भी ज्ञान नहीं। वे सिर्फ यह अनुभव कर रहे हैं कि जिस धुरी से वे लगे हुए हैं, उसमें कोई तेल डाल जाता है। तेल न पड़े, तो धुरी घिस जाए और पहिये दाए-बाए जाकर लुढ़क पड़ें।

इधर छोटा-सा दफ्तर।

उधर प्रेस का मशीन रूम।

बीच में दीवार है। इस दफ्तर से सीधे प्रेस के मशीन रूम में जाया जा सकता है। दीवार के बीच में एक दरवाज़ा है, जो मशीन रूम में जाने-आने देता है। दफ्तर की लम्बाई पूरव से पश्चिम की ओर है। पूरव की ओर मालिक बैठता है, पश्चिम की ओर प्रेस का प्रूफरीडर। दाए-बाए जो जगह है, वहां कागज़ की रिसे रखी हुई हैं। मालिक की मेज़ पर फोन है, मेज़पोश पर रगविरगे फूल-पत्ते छपे हुए हैं। मेज़ के तीनों ओर दो-दो अतिरिक्त कुर्सियां रखी हुई हैं। दोस्त आते हैं, ठहाके लगाते हैं। ग्राहक आते हैं, कुछ छपवाने और छपाई-दर की बातें करते हैं।

शाम के चार बज रहे हैं। छत से लटकता हुआ पखा तीन-चौथाई हवा मालिक को और एक-चौथाई हवा प्रूफरीडर को देता है। उसकी फिटिंग ही ऐसे स्थान पर की गई है।

चारुचन्द्र !

अवस्था पचहत्तर वर्ष ! ब्रजभाषा में तीन खण्डकाव्य, खड़ी बोली में

एक प्रबन्ध-काव्य और चार-पाँच उपन्यास मिल चुके हैं। एक जमाना या जब चारचन्द्र कवि-सम्मेलनों की घोषा होते थे। और भी मिलते मगर पत्नी भी बच्चे थे, नौकरी करनी पड़ी। मीट्रिक पास तो था परन्तु फिरानी हाना पसन्द नहीं था। गजेटेड अफसर हो नहीं सकते थे क्योंकि टैबुलेंट नहीं थे। कहावत है—अस्ता मेहरबान तो यथा पहलवान। किमी तरह की० ए० पास कर लेने पर गजेटेड अफसरी का रास्ता खूब जाता है। संकल्प तो यह था कि साहित्यसेवा करिये और रोटी-जमक भिखता रहेगा। बालिंग होकर भी माबाबालिंग वगैरे रहे। अकल में सारी बातें समाती थीं, यही बात नहीं समाती थी कि रोटी और साहित्य का मामला एक ही महासत में नहीं चलता, दोनों मामलों के जब असय-असय इम्तिहान पास करके आए होते हैं। इसलिए कम-सं-कम इस उम्र तक बीतियाँ प्रसो—कमी कुछ माह, कमी कुछ वर्ष—के लिए बैठ चुके हैं। छोटे-नाटे बहबहारों के संपादक भी रहे मगर सम्पादक की जबह नाम कमी नहीं छपा। नाम तो उनके छनते थे जो पुरी जपाने वाले होते या उनके जो दूसरों की किताबों की भूमिका लिख-लिखकर स्वनामधन्य बन गए थे। साहित्यिक समाजों की अध्यक्षता करते-करते इनके नामों के माये 'आचार्य' दाम्य भी जुड़ गया था। चाराँच यह कि मौलिक साहित्य-साघर्ष भेड़ थे और ये पड़रिये। जब कोई 'जमी भेड़ इनके' बाधम में आती, ये छट एक हीची निकालते और उसके गुणगुने रेसमी बास काट सेते थे।

चारचन्द्र को अब कम सूझता था। मगर वे तो प्रुफ-रीडर। वह काम करना ही पड़ता। भेड़ पर शायी और हिन्दी बब्रेजी संस्कृत और बंनसा के दाम्यकोस हमेधा रखते थे। पिछले छह महीने से चश्मा ठीक से काम नहीं कर रहा था कहीं कोई भूस छूट जाती और घ्राहक इचाप करता तो मासिक भीतर-ही भीतर बात पीसता, मगर प्रकटत शासीनता भरतने का अभिनय करते हुए कहता "चारचन्द्र भी गमतियाँ बहुत छूट रही हैं। चश्मे का घीघा बरभभा सीजिए। घ्राहक बहुत शिकामत करने सये हैं।"

"जी हाँ जी हाँ।"

"आप तो खेड 'हाँ' कहते हैं। किसी दिन सबेरे अस्पताल जाइए। इधर दोस साहब एक नए डाक्टर आए हैं। वे ठीक साईं

वजे पहुँच जाते हैं।”

“जी अच्छा...जा अच्छा।”

मालिक सिगरेट सुलगा लेता है। चारुचन्द्र की मेज़ पर प्रूफो का अम्बार लगा रहता है। चुपचाप प्रूफ पढने लगते हैं।

वाहर चिलचिलाती घष है। सवारिया नाम-मात्र को आ-जा रही हैं। प्रेस के स्वामी भोजन करने चले गए हैं। चार वजे तक लौटेंगे। चारुचन्द्र प्रूफ पढते-पढते थक जाते हैं, तो ज़रा सुस्ताने लगते हैं। अभी सुस्ता ही रहे हैं। निगाहें सडक पर जाती है, तो दिवाकर मलिक नज़र आते हैं। पैदल और परेशान। प्रफ तो बहुत सारे पडे हुए हैं। इन सबो को पढ डालना है। मगर, साहित्य और मगीत सहोदर हैं न। देखकर आखें नही बन्द की जा सकती। हृदय जैसे उछाल मारता है और मेज़ पर झुककर तेज़ आवाज़ लगाते हैं, “मलिक जी, मलिक जी! आइए, आइए। इस तपती दुपहरी मे कहा, महाराज ?”

दिवाकर को मालूम है कि चारु वावू इसी प्रेस मे नौकरी करते हैं। अत आश्चर्य न हुआ और ‘नमस्कार, चारु वावू’ कहते हुए भीतर चले आए। वगल मे एक ऐसी कुर्सी खाली पडी थी, जिसकी वायी वाह टूटी हुई थी, उसे ही चारुचन्द्र के सामने खीचकर बैठ रहे।

“वडी गर्मी पड रही है।” चारुचन्द्र ने कहा।

दिवाकर के वायें कन्धे पर किसी सम्मान-समारोह मे मिला हुआ एक दुपट्टा पडा हुआ था। उसे उतारकर उन्होंने चेहरे और गर्दन का पसीना पोछते हुए कहा, “गर्मी ज़्यादा पड रही है न। देखिएगा, इस साल पानी खूब वरसेगा।”

“भगवान न करे।”

दिवाकर ने पूछा, “क्यो महोदय, कहते तो लोग ऐसा ही हैं कि जब क्य़ादा गर्मी पडती है, तो पानी भी खूब वरसता है।”

“वात तो सही है। मगर, मैं अपनी स्थिति को याद कर ऐमा कह रहा हू। हालाकि मौसम को इससे कोई मतलब नही। मौसम यदि एक-एक आदमी का सुख-दुख देखे, तब तो हद हो जाए।” कहते हुए चारुचन्द्र ने पूछा, “जल पीजिएगा ? ठण्डा पानी है।”

‘उप ईठ लू ।

‘यह भी आपने ठीक कहा । थोड़ा रुककर ही पीजिए, नहीं तो गंसा पकड़ सिपा ।’ चारुचन्द्र ने कहा ।

प्रेस का मासिक खाना खाने के लिए जब बाहर जाने लगा था तो पंखे के स्विच को आफ कर गया था । फोन में तो वह अक्सर तामा डाले रहता । सुबह भी खूता और कहीं फोन करता तो बातें कर लेने के बाद फिर दीर्घ तामा लगा देता । चारुचन्द्र अथवा प्रेस के अन्य कर्मचारियों को माफ फोन रिसीव करने का अधिकार था । उधर से कौन बोल रहा है क्या कह रहा है सब कुछ याद रखना पड़ता ताकि मासिक के आने पर पूरी सूचना दी जा सके । हर माह फोन और बिजली के बिल आते और मासिक कुछ जोर से हर माह बिल देकर भ्रमसाता ‘बड़ा लम्बा चौड़ा बिल आया है । कहां से यह पूरा होया । बड़ी मुसीबत है ।’

उसकी अनुपस्थिति या उपस्थिति बोनार्ही स्थितियों में चारुचन्द्र फोन तो कर ही नहीं सकते थे सिर्फ पंखा चला सकते थे । पर, यह भी मासिक की दृष्टि पर निर्भर था । पंखा चलत हुए वह छाड़ जाता तो हवा का एक-चौथाई लाभ उठा लेते थे करना जो वह स्विच आफ करने चला जाता ता उसे भान करना उनके साहस की बात नहीं थी । आज चारुचन्द्र से न रहा गया । मन-ही-मन सोचा—‘बाहे इसके चलते फाइनेंस हिस्सा क्यों न मिल जाए, मगर पंखा चलेना । तो अपनी जगह से उठ और पंखे का स्विच भान कर दिया ।

मशीन कम में मशीनें चल रही थी । भावाज चूक रही थी । एक छोटी मशीन—ट्रेडम—बो बड़ी मशीनें—फ्लैट । पीछे की ओर एक कमरा था । प्रुफरीडिग का काम शान्ति में होना चाहिए । चारुचन्द्र ने एक बार इशारा किया था कि उन्हें पीछे वाले कमरे में बैठने दिया जाए । मगर, मासिक ही साम आगे की बुनिया की जम्पनी दिमाग में रखता था । उसने समझ लिया इस प्रस्ताव के पीछे चारुचन्द्र जी की गहरी बात है । पीछे वाला कमरा उत्तर की ओर खुलता है । आराम से बिठना प्रुफरणा जाएगा पढ़ेंगे, बाकी समय में मेज पर बिठ भुकाकर सोयेंगे ।

आएगी, तो कवि-कल्पना में डूब जायेंगे। वही चालाकी से बोला था, “चारुचन्द्र जी, आप ठीक कहते हैं। मगर, इससे कोई खास फायदा नहीं। यहां सामने रहने पर आपके कारण कई समस्याएं हल हो जाती हैं। मसलन कई लोग निमन्त्रणपत्र छपवाने आते हैं, उनकी भाषा ठीक नहीं रहती, आप भाषा सुधार देते हैं। मेरी अनुपस्थिति में आप ग्राहकों से बातें कर लेते हैं। फिर कई ग्राहक तो कुछ छपवाने के वहाने आपको देखने आ जाते हैं। आप कोई मक्षिका स्थाने मक्षिका विठाने वाले प्रूफरीडर थोड़े ही हैं। हिन्दी साहित्य में आपका स्थान है, महाराज—और हा, एक बात और सुन लीजिए। मैं आपको प्रूफरीडर नहीं, गौरव और शोभा मानता हूँ। है यहां कोई ऐसा, जो आपके मुकाबले रस, छन्द और अलंकार की जानकारी रखता हो ?”

चारुचन्द्र के आश्रितों का पेट भले ही न भरा हो, मगर इन शब्दों ने जैसे चारुचन्द्र के पेट के कोने-कोने में मक्खन और मलाई भर दी। कितना ज्ञानी है यह समाज का एक स्तम्भ! कला नहीं जानता, मगर कलाकार की सबसे ज्यादा कमजोर नस को बिना चिमटे के पकड़ लेता है। चारुचन्द्र ने खुश होकर कई बार ‘जी हा, जी हा’ कहा था।

“और सब तो ठीक है न ?” दिवाकर मलिक ने पूछा।

चारुचन्द्र बोले, “ठीक ही समझिए” इस बार जो पानी जोरो से बरसा, तो जिस मकान में मैं रहता हूँ, उसकी दीवारें घस जाएंगी। मामूली वर्षा में तो बुरा हाल हो जाता है। मकान-मालिक मरम्मत कराने का नाम नहीं लेते।” फिर कुछ सोचकर कहने लगे, “अपना भी कुछ कहने का साहस नहीं होता। पांच महीने का किराया बाकी है। हर बार यही सोचता हूँ कि कम-से-कम दो महीने का भार एकसाथ उतारूँ और ऐसा करने का संयोग ही नहीं आता। दो महीने तो विजली का बिल भी नहीं दे सका। मकान-मालिक का लडका जब आता है, लाइन काट देता है। चुप रहने के सिवा कोई रास्ता नहीं। आपका तो मलिक जी, खैर, अपना मकान है। अपने घर के नाम पर एक भोपड़ी ही सही, बहुत बड़ी बात है।”

‘हां यह तो है। अच्छा अब आप एक पितास ठंडा जल पिनावा
कीजिए।

‘रामू को रामू ? जरा पण्डित जी का एक पितास पानी तो
पिनावा।

‘मैं मशीन पर हूँ । अम्बर से आवाज आई।

‘अच्छा तुम रहो मशीन पर। कहते हुए चारुचन्द्र स्वयं उठे और
एक पितास ठंडा जल लेकर वापस आए। दिवाकर मलिक ने उनके हाथ
से पितास चामले हुए कहा ‘आपने क्या कष्ट किया चारु बाबू ? बतला
देते मैं ही से सेता। आप इतने बड़े कवि ठहरे ।’ गद् गद् गद्

‘कोई बात नहीं। जो बड़ छोट कहत अपराधु।’

दिवाकर मलिक ने स्वयं उठकर पितास यथास्वांग रख लिया। अब
वह जैसे कुछ कहना चाहते थे पर शब्द बले में ही अटक रहे थे। सभी सदस्यों
को बाहर निकालने का सूत्र मिल गया। चारु बाबू ने कह दिया ‘परमों
मेन रोड पर देहात के एक आदमी को सू भग गई। सड़कड़ा कर जो मिरा
सो फिर उठा नहीं। अमल-बमल के दुकानदार पानी पिताते रह गए।

दिवाकर बोले ‘बिना चक्करत कोई टहलने-बूमने तो निकल नहीं
सकता। मैं भी साचारी में निकल पड़ा।

‘साचारी इस बकल निकलने की कैसी साचारी थी

दिवाकर मलिक ने कहा ‘मंभसी सड़की को खोरों का बुझार है।
चार रोड हो गए। सुई लयती है तो बोझा उतरता है।

‘सुई लय रही है न ?

‘उत्त से रुक गई है।’

‘क्यों उस तो आरी रक्षिए।’

‘मैं तो रोकना नहीं चाहता था।

‘तो क्यों रोका ?

दिवाकर मलिक ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए धीरे से कहा ‘पैसे
की नहीं हैं कि मुझमें और दबाएं खरीवी जाएं। सोचते-सोचते निकल
पड़ा। उसकी बेचैनी और छटपटाहट बेबी नहीं गई। इस स्पष्ट भी बर
जाते, तो काम चल जाता। और आशाभरी मञ्जरों से चारु

देखने लगे। स्पष्ट शब्दों में मागने का साहस नहीं हुआ।

“दम रुपए *1” कह कर चारुचन्द्र ने जैसे भीतर-ही-भीतर एक आह भरी। एक रुपया भी दे सकने की स्थिति में नहीं थे, मगर दिल चाहता था कि हजार रुपए दे डाले। बोलते क्या? जब कुछ दे नहीं सकते, तो बोलते क्या? एकदम चुप। दिवाकर समझ रहे थे कि चारु बाबू इस समस्या को हल करने की दिशा में कोई उपाय सोच रहे हैं।

“कल बाईस तारीख है न?”

“हां।”

चारुचन्द्र का उत्साह फिर फीका पड़ गया। उन्हें यह बात स्मरण हो आई थी कि प्रेस-मालिक बाईस तारीख को चलते हुए महीने के वेतन से एडवान्स दिया करते हैं। उन्होंने सोचा, दिवाकर जी को यह कहा जाए कि आज आप किसी और से ले लीजिए और कल ही लौटा देने का वादा भी कर दीजिए। पर, भला यह कैसे होगा? कुल जमा पौने दो सौ रुपए माहवार की नौकरी है। दस-पाच करके अब तक मालिक से साठ रुपए ले चुके हैं। एडवान्स तो वेतन का आधा ही मिलता है न! मालिक बहुत खुश होंगे, तो तीस रुपए कल दे देंगे, और कल ही किसी और को बीस रुपए देने हैं। बच जाएंगे दस रुपए। घरखर्च के लिए भी कुछ चाहिए। जमालखा मानने वाला नहीं। उसे रुपए न पहुँचे, तो वह तेईस तारीख की सुबह आठ बजते-बजते अपनी चाबियों के ढब्बे से दस्तक देगा। दरवाजा खोलते ही तीखे स्वर में बोलेगा—“तुम कल आया नहीं?”

चारुचन्द्र रुपए के बदले कोई आश्वासन भी देने में असमर्थ थे, चुप रहे। इसी बीच प्रेस-मालिक आ गया। उसने दिवाकर मालिक पर उड़ती हुई निगाह डाली। फिर देखा, पखा चल रहा है। चारुचन्द्र डर गए। अभी अगर एक मिनट पहले पखे को बन्द कर दिया होता, तो मालिक की निगाह कुछ दूसरी तरह से पड़ती।

“क्या हुआ, चारु बाबू, प्रूफ सब पढ़ दिए गए?”

“जी नहीं।”

“क्यों, नहीं क्यों?”

“दो तो पढ़कर दे दिए हैं। मूल कापी बहुत गन्दी है। रुक-रुककर

पढ़ना पढ़ता है।”

दिबाकर मलिक की पीठ मानिक की ओर थी। वह शांत रहे। हिसे-दुसे तक नहीं। प्रेस के काम उनकी समझ में आते भी नहीं। उनमें सुनना ही चाहें तो कुछ सीजिए मृत्यु के बाप के बारे में कुछ।

“बच्छा गटवरी का टुकड़ा ? कहते वह मुस्करा पड़ेम और भुलाएँ

“तियदाऽतिगदाऽवेई,

तिगदाऽतिगदाऽवेई

तिगदा दिगदिगतिगदादियदिय।

तत् तत् तत् तत्

वेई।’

ऐसे हज़ारों बोम उनके विमाव में भरे पड़े हैं। तीस साल इन बोलों को याद करने और ताब कर उनका स्वरूप दिखाने में बिता दिए हैं। मगर यहाँ तो माहीन ही बूछा है। मानिक खोरो से मन्ना न पड़े इसलिए उसका ध्यान बाँट देने के इरादे से चाव बाबू दिबाकर मलिक की ओर संकेत करते हुए कहते हैं “इनसे पहले से परिचय है कि नहीं ? आप हैं दिबाकर मलिक। कत्थक के आचार्य।

‘बच्छा बच्छा। मानिक जैसे कोई नोट नहीं लेता। उसकी मज़र में ऐने सोग कोई हस्ती नहीं होते। उसके हृदय में तो इलेक्ट्रिक सपनाई बिभाग का वह बड़ा बाबू हस्तीबासा है, जो दस प्रतिघट कमीशन पर उसके प्रेस को काम देता है। दिबाकर मलिक से परिचय कराने की जबह यदि चाबचन्द्र ने यह कहा होता कि ‘बिजली आफिम के बड़े बाबू ने फोन किया था। चाव-चाव बने बाबोमे। कुछ काम है जस्टी छाप कर देना है’ तो मानिक भूल जाता कि पंचा क्यों बल रहा है। फिर भट बड़े बाबू को फोन कर कहता “भाइए हुजूर, मैं स्वागत करने की प्रतीक्षा में हूँ। चाड़े तीन होने ही जा रहे हैं।”

मगर इस प्रकार का कोई संदेश था ही नहीं।

चाबचन्द्र ने फिर कहा “आपने तो इनका मृत्यु देखा भी होगा।

दिबाकर मलिक धीरे से पीछे की ओर भूम गए।

मानिक बोला ‘देखा होगा याद नहीं।’

“नमस्कार ।” दिवाकर मलिक ने हाथ जोड़कर कहा ।

“नमस्कार ..।” बड़ी अनिच्छा से बोलते हुए मालिक ने कहा, “चारु बाबू, इस गति से काम नहीं होगा । आज फर्स्ट आवर में मैं बैंक गया हुआ था । वहा से भी काम आने वाला है । एक लाख फार्म छापने हैं । उन्हें तीन रोज़ के अन्दर चाहिए । और आप हैं कि कच्छप गति में चल रहे हैं ।”

“मवको पढे डालता हू ।”

“आप तो हर रोज़ यही कहते हैं, जनाव ।” मालिक का तेवर बदल गया ।

कई खण्डकाव्य, प्रबन्धकाव्य और उपन्यासों के रचनाकार ने किसी चुनौती की सम्भावना देखी, तो कापते हुए स्वर में कहा, “वैसे तो मैं यही कोशिश कर रहा हूँ कि सारे प्रूफ पढ डालू, लेकिन यदि कुछ वच भी गए, तो साथ लेता - ाऊगा । रात में सबको ठिकाने लगा दूंगा और सबेरे लेता आऊगा ।”

प्रेस के गौरव और शोभा को एक प्रकार में फटकारते हुए मालिक ने कहा, “देखिए चारु बाबू, आपकी नज़दीक की दृष्टि अब ठीक से काम नहीं करती और आप चश्मे का शीशा बदलवा नहीं सकते । काम इस तरह चलने का नहीं । मेरी राय में तो, हालांकि कहते हुए मुझे खुद बुरा लगता है, आप अब आराम कीजिए । मैं किसी और आदमी की तलाश कर लूंगा । आपकी तरह वह विद्वान तो नहीं होगा, मगर” ..।”

चारुचन्द्र को रस, छन्द, अलंकार के जितने उदाहरण याद थे, जैसे वे सब के सब भूल गए । वह चुपचाप प्रूफ पढने लगे । दिवाकर मलिक ने धीरे में कहा, “बन्धु, आप काम कीजिए । मैं चलता हू ।”

चारुचन्द्र प्रूफ पर सिर झुकाए रहे । दिवाकर मलिक उठकर सड़क पर आ गए ।

युवावस्था में जिस कुमारी के चित्त और चितवन—दोनों ही बचपन हा उसके कौमार्य की रखा बिघाता भी नहीं कर सकता मनुष्य की भसा-क्या बिसात ! कल्याणी का भी यही हाल था । वह युवा पुरुषों की ओर बढ़े और से देखा करती और उसके मन में कभी-कभी बिकार भी उत्पन्न हो आया करते थे । ऐसा क्यों होता है इसने लिए उसके पास कोई तर्क नहीं था । वह इसे बस स्वाभाविक मानती थी । बिबाकर मलिक ने उसे मृत्यु की इतनी प्रारम्भिक सिखा दे दी थी कि वह छोटे छोटे बच्चों को मृत्यु की सिखा दे सकती थी ।

सयानी कन्या घर में दिन-रात बूटती रहती है ऐसा सोच कर दिवाकर मलिक ने तय किया कि इसे अपनी ही माहन का कोई काम मिल जाए, तो यह अपने को किसी काम में लगी-बंधी पाएगी और पारिषमिकस्वरूप कुछ अर्घप्राप्ति भी होती रहेगी । अपने घर से चार भकान उत्तर रमोला दीवी रहती थी । कल्याणी से चार-पांच साल बड़ी होंगी—भरा-पूरा शरीर, बड़ी-बड़ी आँखें । बी० ए० पास थी और किसी नौकरी की तलाश में थीं । पञ्चवाड़े-भर पहले किसी ने बतलाया कि रमोला की एक स्कूल में नौकरी लग गई है । स्कूल मुख्तार का था और सरकार से इसे मंजूरी नहीं मिली थी । सिख समुदाय वाले आपस में चर्चा करके यह स्कूल बना रहे थे—सातवें बर्ग तक पढ़ाई होती थी । मुख्तार की इमारत काफी बड़ी थी और उसी के एक हिस्से में स्कूल बना रखा था । नाम था—गुरु नानक विशालय ।

मुख्तार प्रबन्धक कमेटी के प्रेसीडेण्ट के पास रमोला का आवेदन हो माह पहले से पड़ा था । स्कूल को अंग्रेजी पढ़ाने वाली शिक्षिका की आवश्यकता थी । प्रेसीडेण्ट साहब चाहत थे कि इस पद का भी कोई सरदारिन शिक्षिका ही सुयोगित करे । पर, अब कोई और नहीं मिली तो रमोला को रक्त दिया गया । जैसे मन में यह बात छुपा कर रख ली

गई कि अग्रेजी पढाने वाली किसी 'कौर' के मिलते ही रमोला का पत्ता साफ कर दिया जाएगा।

दिवाकर मलिक कल्याणी के लिए बात करना चाहते थे। उसने प्राइवेट इम्तिहान देकर मैट्रिक पास किया था, छोटे वच्चो को नृत्य आसानी से सिखला सकती थी। मगर, सकोची स्वभाव के कारण कुछ कहते नहीं बनता था। इसी सकोच मे चार माह बीत गए। रमोला अपने बाप के घर ही रहती थी। वह विधवा थी। पति के साथ पाच साल रही। पांच साल मे उसे गर्भवती होने का एक बार भी आभास तक न हुआ और छठा साल आते-आते उसका आदमी अचानक पेटदर्द से चल बसा। ससुराल-वालो की दृष्टि मे वह वाङ्म-वन्ध्या के अतिरिक्त 'आदमी को खा जाने वाली' भी मानी जाने लगी और वहा उसका रह पाना दूभर हो गया। मायकेवाले अच्छे खाते-पीते थे, लेकिन समय तो उसे भी काटना था। समय काटने के अलावा एक और कारण था—भाई-बाप रमोला को आखो पर विठाते थे, मगर भाभियो के लिए तो वह आख की किरकिरी थी। जब तक बेचारी सुहागिन थी, ये भाभिया बुलावे-पर-बुलावा भेजती।

जब सुहाग लुट गया और वह यहा वैधव्य काटने आई, तो भाभिया घुमा-फिरा कर उसे ऐसी कहानिया सुनाने लगी, जिनका सार यह होता था कि पति के मरने पर नारी को या तो पति के साथ सती हो जाना चाहिए या फिर पति की याद में इस तरह घुटते रहना चाहिए कि ब्रह्मा की खोची हुई लम्बी आयुरेखा अपने-आप छोटी हो जाए। भाइयो ने ठीक ही सोचा कि वहन जब कही नौकरी पकड लेगी, तो कुछ लाकर देगी भी और इस प्रति माह के 'देने' से रमोला को दूसरी प्रकार की कहानिया सुनने को मिलेंगी।

रमोला के स्वभाव मे गजब का प्यारापन था। वह सहना जानती थी, कहना नहीं। उसे ठगे जाना पसन्द था, ठगना नहीं। भीतर चाहे लाख आग भरी हो, बाहर से वह एक निहायत ताज्जा खुशनुमा गुलदस्ता ही थी।

वह यदाकदा दिवाकर मलिक के घर थोड़ी देर के लिए आ जाया करती और दमयन्ती, कल्याणी तथा वागेश्वरी से दु ख-सुख बोल-वतिया-कर लौट जाती। औरतो मे जो एक अवगुण पाया जाता है कि बिना इस

या उसकी सिकायत किए उन्हें चीज ही नहीं पड़ती उसमें नहीं था। वह बस अपने ही तक सीमित रहती। मुहम्मद भद्र की ताजा खबरों में उसके पास होतीं और न वह ऐसी खबरों का संग्रह करना ही पसन्द करती थी।

ऐसे ही जब वह एक रविवार को इनके घर आई तो बैठक में मुसी और सीधी बन्दर आने लगी। उसन इधर-उधर नजर नहीं डाली। डाली होती तो दिखाकर मलिक के जाने अवश्य धीस भुकाती। वह पुरब की आर बालकृत्य की मूर्ति के समीप अचलते किसी नाम के लिए बाल ठमार कर रहे थे। सामने एक छोटी-सी कापी भी और वह जोस ठमार करने में बाहरी मुस-बुस जोए हुए थे।

थोड़ी बकाबट महसूस हुई ता ध्यान बंटा। जापन की ओर चल दिए। आत ही रमोसा पर नजर पड़ी। पूर्वी घर से बाहर वही पास ही गई थी। दमयन्ती ने बरामदे में अटाई बिछाकर रमोसा को बिठा लिया था। कस्याबी और बामेश्वरी दीवार से पीठ सटा कर उसके बाएँ-बाएँ बैठ गई थी। दमयन्ती पूर्वी की मजक की मरम्मत करने लगी थी। बीच-बीच में कुछ जोस भी देतीं। बामेश्वरी की आबाद में बायींश्वरी की ही मुहुलता और कामसता थी मगर वह देहव कम बोनती थी। रमोसा आती ता जानबुझकर उसे सम्बोधित किया करती। बामेश्वरी प्रसन्नानुमार कभी मुस्कय पड़ती कभी कुछ जोस देती और कभी मौन रहकर कबम देखती रह जाती।

रमोसा पर नजर पड़ते ही दिखाकर मलिक प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बोले "अच्छा रमोसा बिटिया आई है।"

रमोसा जैसे चीक पडी। उसने दोनों हाथ जोड़ लिए।

आशीर्वाद देत हुए दिखाकर मलिक ने कहा "बेटो बिटिया बेटो। मगर एक काम करना।

"क्या, आचाजी?"

"जब लटिमे समयो तो मुस से मिस लेना। मैं बैठक में ही हू। पकाने तो जा रही हो न?"

"जी आचाजी। रमोसा बोली।

फिर उन्होंने दमयन्ती से पूछा, “पूर्वी कहा है ?”

उत्तर में दमयन्ती ने सिर्फ उन्हें देखा, कुछ कहा नहीं।

कुछ देर बाद जब रमोला वापस जाने लगी, तो बैठक में आकर ठिठक गई। दिवाकर मलिक का ध्यान बटा। रमोला ने सहज विनय-भरे स्वर में पूछा, “क्या आज्ञा है, चाचाजी ?”

दिवाकर मलिक ने उसे आखों के सकेत से पास बुला लिया। बोले, “बैठ जाओ, बैठ जाओ।”

रमोला पायताने सिमट कर बैठ गई। मर से आचल सरकने लगा था, उसे सभाला। दिवाकर मलिक ने पूछा, “स्कूल में मन लग रहा है न, बेटी ?”

“जी, सब ठीक है।”

“सुनो, तुम्हारी बहन कल्याणी के लिए बहा कुछ हो सके, तो सोचो। छोटे बच्चे और बच्चियों ही को तो पढाना है। तुम जानती ही हो कि यह मैट्रिक पाम है। बच्चों को पढा सकती है, नाचना-गाना सिखा सकती है। मैं चाहता था कि जब तक इसका ब्याह नहीं हो जाता।”

रमोला जैसे सब कुछ समझ गई। बीच में ही बोली, “एक दिन सरदार जी कह रहे थे कि बच्चों को थोड़ा नाच-गान सिखाने का भी प्रबन्ध होना चाहिए। कोई टीचर मिल जाए, तो पश्चिम वाला हाल इस काम आ जाएगा।”

“तो फिर कहो उनसे। बतला देना कि किसकी लडकी है।”

“अच्छा, मैं कहूँगी।” रमोला ने तनिक रुककर आगे कहा, “परन्तु, चाचाजी, बहा एक बड़ा भारी दकियानूसीपन है।”

“क्या ? वे लोग वी० ए० पास टीचर चाहते हैं ?”

रमोला ने उत्तर दिया, “नहीं, उन्हें कोई ‘कौर’ चाहिए।”

“‘कौर’ चाहिए, मतलब ?”

“चाचाजी, पहले मैं यह बात नहीं जानती थी। अब पता चला है कि हर सिख औरत के नाम के बाद ‘कौर’ लगा रहता है। धीरे-धीरे सारी बातें मालूम हो रही हैं।” रमोला बोली।

“क्या और भी कोई बात है ?”

‘हूँ ढल कभी ढलकर धुल से ढेलिए । गुरदारे के पूरबी हलसे में ढलहरी रूप की बीधियो कुकाने हूँ ।’

‘हूँ हूँ ठल सही ।’

रडुडल से कहुल ‘उनमें स एक भी कुकलन कल स्वलमी र्शरतलन नहूँ हूँ । डतलनड डल कल इस डलडले में डे डुडन डड संकीर्ण हूँ । डलडडलड डलड डल से कड सलल-डरलवलर नहूँ हूँ । र्शरतलन की कुकलन डे डडर कलसी डीड कल डलड सलल की कुकलन से डलर डलने कड हूँ ठुी भी डे डहलं डे सलडलन नहूँ करीडेडे । डलहलरलरलडु डंगलडलरलडु डल डुडरडलडु डे डडलडलरलडु की ठुी डलड डुड डीडलए, उन कुकलनडु में एक डी कुकलन कलसी डंडलडी हलडू के हलड नहूँ उठी हूँ । डे सडुडु डे डडनल करुडलर करुडे हूँ डरररत डडने डर डलहलरडुडुड डुीर ईसलई से डी डुडुडी डलं डेडे हूँ । डडर उनके डलसुडु की डसुडी डं डडर एक डड भी डडडीन कलसी हुुंगी ठुी डे उडे कलसी सरडलर डी डल कलसी ‘कुर’ कुी डेगु । डे रहुडे ठुी हलडुसुतलन में हूँ डडर उनके डलसुडु के डीसर डुसरु डेडल की कसुडनल रहुडी हूँ ।

‘डल कुुडन-सल डेड हूँ ?’ डलडलकर डलडक डे डडी उरसुकुतल डे डुडल ।

रडुडल डे उरर डलडल ‘डल डेड हूँ—सलडलसुतलन ।

‘हूँ डडडलन’ हूँ डडडलन- ‘इस एक हलडुसुतलन डे डुी कलडने सलड डलकडडे ? डलडलकर डलडक डुडे ‘डल हलड सलडुडु कल ही नहूँ डुीरुडु कल भी हूँ । हलरडन डडडी डडुडी डडन डडलडे हूँ, ठलडुर डडन । डेठलडन डलडल डुीर कलरकलडरसुडी के कलडलड डुडडे हुुए नहूँ डकडे डुीर कलर इसी डलड डर डडने कुनलडसुडेड में डुडु भी डुडुडे हूँ । डलडलड डे डलरी डलरु डेरी सडडुडु में नहूँ डलसी । डलं ठुी डुडडु डुीर डरन डडलने स डलसुतल रहुल ।

सुन कर रडुडल डुडी ‘हलडलरु डलं डरुडलडलन सडलड कल डलर डडने डुीरुडु से सगलडल डललल हूँ कल उडकी डलडलड डलसडलन ठक डल डुडुडी हूँ । डुडुडु कुनलड सडु कर डररकर कल डडन डडने हूँ डुीर डलं डलकर डुडु डलडलडलड डरुडुडलडु कुी सुडे से डडलले हूँ । डुीर, डलडलडी डे डुीर डलडलडु डी डुरेसीडेडुडु सलहड से कहुंगी । कड डल रडुडुडु में डलएडु डी ।’

‘डल डुडुडु हुुडल कलडलडल ।’ डलडलकर डलडक डुडे । रडुडल डे उनुडु हलड डुडे डुीर डडने डर डलसी डरुडु ।

नाटक अभी खत्म नहीं हुआ है।

अभी-अभी सारी फुटलाइटें जली हैं। परदा उठने वाला है। दर्शकों ने अपनी आंखों पर से पट्टियां नहीं उतारी हैं। कुछ पुरुष दर्शक घूमपान करना चाहते हैं। सिगरेट-माचिस चाहिए, और वे इन दो चीजों के लिए अगल-अगल बैठे हुए दर्शकों की जेबों में हाथ डालने लगे हैं। दर्शकों में महिलाएं भी हैं। वे अपने गालों और ललाट पर रुमाल फिराना चाहती हैं। इसके लिए वे भी ऐसा ही करती हैं। दूसरी के पर्स को चुपके-चुपके टटोल रही है।

घण्टे, दो घण्टे, चार घण्टे पास बैठने का रिश्ता।

सभी रिश्ते को भुनाना चाहते हैं। यही आधुनिकता है, समयबोध है, युगबोध है, कालबोध है। जो रिश्ता दूध की खाली बोतल को नहीं भर पाता, उम रिश्ते को लोग बूचड़खाने के दरवाजे पर छोड़ आते हैं। रिश्ता बेचारा घबड़ा कर इधर-उधर देखने लगता है, तब तक बूचड़खाने का कढ़ावर मालिक झपट कर उसे अन्दर खींच लेता है।

अरे! अरे!!

वह देखिए, फुटलाइटों पर कोई रगविरगें कागज के टुकड़े लपेट रहा है। आगे का खेला शुरू होने वाला है।

लोग विशुद्ध कला के प्यासे हैं न!

मगर ये सब-के-सब वदमाश हैं। इनमें स्वयं ही कोई शुद्ध नहीं है, निखालिस नहीं है। ये सारे तमाशा देखने वाले हैं।

हाय, परदा उठता है!

परदा गिर जाता है। इस प्रक्रिया में यह दिखलाया गया कि दिवाकर मलिक चवूतरे पर पेट के बल नींद से सोये हुए हैं।

पिछला परदा गिर जाता है और अगला परदा उठ जाता है। जैसे हृदय परदे के पीछे है और शरीर सामने। वही पुरानी बैठक।

नेपथ्य से बस्तक होती है। हमयन्ती जाती है। भातों में उगामी के साथ एक जिज्ञासा भी है। विष की आर बढ़कर पुछनी है "कौन ?

"मैं !

"मैं कौन ?

"हैदर।"

दरवाजा खुल जाता है। आयन्तुक बड़े संकीर्ण से भीतर कमर रखता है। पतलून-कोट और टाई म है। पचास साल में कम का नहीं। सहन अच्छी है। पैतीस साल से अधिक का नहीं लगता। 'आबाब खर्ब' करता है और बेहद मुहम्मदमरी आबाब में पुछता है, "दिवाकर घाई घर में हैं न ?

"आपका आना कहां से हुआ ?"

अजी, मैं यहीं से आया हूं। दिवाकर माहब भरे पुरान अजीबों में हैं। आप उन्हें कहिए, हैदर आया है उछल पड़ेगे।"

"एसा ?"

"और नहीं तो क्या।

"पहले तघरीफ ता रलिए" ।

हमयन्ती की पढ़ापी-मिखाई साधारण हुई थी। उच्च कुम की शायक-कन्या थी। मायने में थोड़ी संस्कृत पढ़ी थी, बाड़ी हिन्दी। समुदाय में कुछ स्वाभ्याय का अबसर मिसा कुछ दिवाकर मसिक की संभति का बतर। पढ़-सिते सोगा से कामवे में भातें कर लेती थीं। सकिन सब कुछ नारी-श्रील के भीतर। सारी हंसी हंठों क भीतर ही रहती। ब्हाके सैवे सघाय जाते हैं जानती तक न थी। दिवाकर मसिक संकीर्ण-समारोहों के अनुभव मुभाया करते थे। उनसे भी कुछ ज्ञान बढ़ा या। पति की समुपम्विति में भी कुछ लोंग आ ही जाते थे। यह तो कोई जरूरी नहीं था कि जब कोई मिसने आवे, तब दिवाकर मसिक घर में हों ही। पुत्रियां सपानी हो गई थी। दिवाकर मसिक की मरुत हिजायत थी कि वे बाहरी सोगों क सम्पद से बचन रहें। वे उनमें तमी मिसकर कुछ बोप सपनी है — तमती किमी कारवबरा घर में न हों।

एट माहट भी जम उठती है।

मधी रोघनी हमयन्ती और हैदर के बेहरे की पनाबा सपना से

उजागर करने लगती है।

दिवाकर इस समय घर में है या नहीं, इस प्रश्न को दमयन्ती गौण बना देती और बड़े हौले में कहती है, "ये तो सचमुच बड़े दोस्तनवाज हैं। कभी इस दोस्त, कभी उस दोस्त की चर्चा किया ही करते हैं। अब इनमें कौन इनका सच्चा और कौन झूठा दोस्त है, यही जानें। अब आपसे क्या बतलाऊ, पहाड़पुर स्टेट के बाबू साहब के बारे में भी कहा करते हैं कि वे मेरे दोस्त हैं। एक की बात हो, तो कही जाए "सैकड़ों लखपती जैसे इनके घुघरुओं से लिपटे रहते हैं।"

हैदर कुछ मुस्करा कर कहता है, "जाहिर है। दिवाकर भाई अपने फन के आफताब हैं। फिर बड़े-से-बड़ा और छोटे-से-छोटा आदमी इनकी दोस्ती पर नाज करता होगा।" हैदर एक शेर पढ़ना चाहता है और अपनी गर्दन शायराना अन्दाज़ में घुमाता है। अर्ज करने लगता है, "हजारों साल नरगिस अपनी बेनूरी पे रोती है, बड़ी मुश्किल से होता है।"

दमयन्ती के लिए यह शेर कुछ नया नहीं है। खड़ी-खड़ी पूछ बैठती है, "तब से आपकी दोस्ती है इनसे?"

हैदर बड़ी बेतकल्लुफी से कहने लगता है, "अजी, कुछ न पूछिए, फनकार में एक दिन की दोस्ती हजार साल की दोस्ती का मुकाबला करती है। आपको दिवाकर भाई ने बतलाया भी होगा कि बहुत छोटी उम्र में ही ये घर से भाग निकले थे...।"

"हा, नृत्य सीखने के लिए।"

"जी हा, आपने सही फरमाया। आपको इन्होंने यह भी बतलाया होगा कि हैदर यही के शाहगज का रहने वाला है।"

"जी, यह नहीं मालूम।"

"खैर, तो हम लोग स्कूल के दिनों के दोस्त ठहरे।"

"वाह • मगर आप इसके पहले कभी आए नहीं।"

"अजी, आने को तो समझिए मैं तड़पता था। दिवाकर भाई तो स्कूल-कालेज की पढाई से मुखालफत ही करते रहे। फन की दुनिया का इन्मान कुछ होता ही ऐसा है। दास-मास्टर बनने के लिए जिन दिनों ये

मधुप, बनारस, मलमऊ, आभियर, राजस्थान के मामी डॉक्टरों के यहाँ
पककर समाते रहे मैं कासेज की पढ़ाई करता रहा। गुवा के कर्म में भी
ए० पास किया और ।’

“और ?”

“नहर के महकमे में मुसाबिम हो गया। पाँच साल फ़िरानीपीरी
करती पड़ी। फिर मज्जेद अफसर हो गया। कह कर हैदर ने डरा सिर
सठा कर नमयन्ती की ओर देखा गया जतनामा आह्ला हो कि जो हैदर
उससे बातें कर रहा है वह कोई ऐसावीय मल्बूलीरा नहीं है। वह मज्जेद
अफसर है मज्जेद। छोटी-बड़ी कई किताबें रट कर उमन कमीशन का
इम्तिहान पास किया था। तब मज्जेद का था उसका जनरल मन्त्रि।
अलीका व जयसों में पाये जाने वाले बेहूय गुवार जानबरा के नाम फौरन
बतसा सकता था। क्या पता कमीशन के इम्तिहान में क्या पूछ बैठें ? तब
उसे वह भी भाव करना पड़ा था कि डा० दुसतर कौन थे और फात की
राज्यक्रांति के मुख्य कारण क्या थे ? उसे तब यह भी याद था कि सबसे
पहले बीमानिक पद्धति से किसने नीक बनाया और हिन्दुस्तान के किन-किन
इलाकों में बिनायती बसे पाए जाते हैं। हालांकि परीक्षा में सफलता प्राप्त
करने और मज्जेद अफसर की कुर्सी पर बैठने के बाद वह रोज ही अनुभव
करता है कि कम्पिटिटिव एग्जामिनेशन पास करने के लिए उसने जो कुछ
पढ़ा और भाव किया था इस कुर्सी से उसका दूर का भी रिश्ता नहीं रहे
पया। मौत के क्षण में उमाय जगाने के बाद बतौर इनाम के एक अवद
नौकरी मिली जो हर पहली तारीख को अपने साथ एक बग़दर मानी है
इस बात के लिए उसकी तारीफ़ करनी चाहिए कि उसके सारे जेवरत
मन्त्रि को नौकरघाही से बिना कफन के बफ़न कर लिया और अब जब
वह अपने बफ़र की सीढ़ी से उतर जाता है तो हर बात में बोधता है—
‘यस सर’ और जब फिर नीचे उतर कर जाता है, तो रात रात हठों से
सुनता है—‘जी हुजूर। जहाँ से उमे ‘समाम’ बागा जाता है वहाँ पहुँच कर
दांत निपोड़ता है और जहाँ उसे ‘जी हुजूर’ सुनत रहने का बिन-भर मौजा
मिलता है वहाँ दांत बढ़ा देने का सेवर बनाये रखता है। जब अपने
कानों में सुनता है कि उसका अपराधी बड़े बानू से गढ़

बुला रहे हैं' तो उसके सीने में एक गुदगुदी-सी उठती है। लगता है, ज़माने की त्रिछुड़ी हुई महवूवा मिल गई और मिलते ही उसने मुहव्वत से लवरेज़ अपने गरम-गरम होठों को, जिन पर हल्की-गुलाबी लिपस्टिक की कलई की हुई है, उसके होठों पर एकाएक रख दिया।

नौकरशाह, जिन्दावाद !

यह भी अपनी दुनिया का सुलतान होता है।

हैदर आगे कहता है, "दिवाकर साहब छुटपन में ही बड़े जज़वाती किस्म के इन्सान रहे और तभी तो आर्ट की दुनिया में शोहरत उनकी कदमबोसी करती है।"

"सिर्फ शोहरत की दुनिया में, हैदर साहब।"

"क्या मतलब?" हैदर जैसे चौंकता है।

दमयन्ती खुल जाती हैं। कहती हैं, "शोहरत एक ऐसा आसमानी महल है, जिसके कोने-कोने में धूम जाड़े, मगर कपड़ों के नाम पर यहाँ न एक रूमाल मिलेगा, दवाओं के नाम पर किसी मिक्चर की खाली शीशी तक न मिलेगी, अनाज के नाम पर चुहिया भी मारे भूख के तड़पती नज़र आएगी और सर के नीचे एक अपनी छत हो, इसके बदले में यही आवाज़ सुनायी पड़ेगी - यह महल बड़े-बड़े नौकरशाहों और व्यापारियों के लिए है, जनप्रतिनिधियों के लिए है और जनप्रतिनिधियों के चमचों के लिए है।"

सुन कर हैदर जैसे एकदम से उछल जाता है। कहता है, "आप भी चुटकिया लेना खूब जानती हैं। कलाकार-फनकार तो अजीबोगरीब होते ही हैं। वे तो अपने आर्ट में इस कदर मशगूल रहते हैं कि पेड़ की छाया हो या महल की छाया, उनके लिए कोई फर्क नहीं पड़ता। इनकी हस्ती ही अलग होती है। वे तो ख्वाब में भी किसी का अहसान लेना नहीं जानते।"

दमयन्ती अपने आंचल को सिर पर से सरकने नहीं देना चाहती। उसे सभालती हुई कहती हैं, "कोई अहसान करने को तैयार भी तो नहीं होता। लोग तो यही चाहते हैं कि अगर किसी कलाकार को बूद-भर पानी पिलाओ, तो प्याला भर उसका खून चूस लो।"

"हैं हैं आप यह क्या सुना रही है? मैं एक अदना आदमी हूँ, मगर

इन पर जान देता हूँ 'भी हाँ । कालेज ने विर्मा में मैंने एक मी इक्याबन पत्रमें लिख मारी थी । बुरा हो उम फरइमम इयर बासी लड़की राहाना का यजम गाने की शौकीन थी भरा पूरा सीवान ही उड़ा लिया उमने मुझतर यह कि मैं भी फनकार का एक छोटा-सा दिल रखता हूँ ।

माटक का डायरेक्टर बड़े चाभु किम्म का मयना है ।

परदे को उमट-मसट बेता है और स्टेज पर बिबाकर मलिक नजर आने लगता है । वह जपूठरे स उठ खड़ा हुआ है और नीबार क पीछे मटक सब कुछ मुनने लगा है । उसे न तो वमयन्ती देक पा रही है और न हीवर । पता नहीं क्या बात है कि मुनत हुए उमक बेहरे पर बीमिया किम्म ने प्राथ उभरत है । कभी एक हाथ से अपने मीन को छोरा न मममने मयता है, मसा बबा कर 'आह भरता है और कभी मुस्मे स भरा नजर आता है ।

यह सब कुछ नहीं डायरेक्टर की माया है ।

परदे का उमट-फैंग ' फिर वमयन्ती और हीवर बही बैठक बही साइट बही क्षत्र बही सेटिंग बही सिचुएसन ।

वमयन्ती की बुद्धियों में कोयम की घुस लिपटी नजर आती है । वह उन छिपान का यत्न करती हुई कहती है 'आप बीम लाग ही कमाकारों के पाशों में जूते डालते हैं बरना कोई इनकी परबाह नहीं करता । पूरा समाज कमाकारों को एक ऐसे बीबीवार क रूप म देखना चाहता है जो आबाज तो गनी-गनी मयाए, मयर किती से एक प्यासी चाय की भी बाधा न करे । वह चाय नहीं मांग कर अपना स्वाभिमान बचाता है सोम टाट उम चाय न बेकर देहात म मंमबाये मए भी मजबानी इरजत तम कर देत है ।

आपको याद होया ही कि दर्शकों ने अपनी-अपनी बाहों पर एक-एक बिस्सा लया रखा है जिन पर लिखा है—'हम घुस कला के प्यास हैं । फमत वमयन्ती के डायसॉग मुन कर एक बलक अपनी वयम नामे क सिर को झकझोर कर कहता है—'युव यह सब तो बड़ा ही अननुरम है । वमयन्ती के संबाह में इतना तीखापन कुछ पंथ नहीं रहा है । बहुत आवेय है उमके कथन में ।

और, जिसका सिर झकझोर गया वह उमके कान में मुह मराकर

कहता है—“यह ड्रामा है, चेले, कहानी या नॉवेल नहीं। ड्रामे का डायलॉग कहानी और उपन्यास के मुकाबले ज्यादा गतिशील, ज्यादा सेनसिटिव और ज्यादा चोट करने वाला होता है।”

हैदर कहता है, “ऐसे लोगो के नाम पर लानत फेंकिए” हम दोनों तो एकसाथ हाई स्कूल में तीन साल रहे। इन तीन सालों में मैंने दिवाकर साहब को नाश्ते की छुट्टी में कम-से-कम बारह बार अपने पैसों से आइस-क्रीम चटाई होगी, छ बार मूंगफली और तीन बार सोहनपापड़ी सोहनपापड़ीवालो पर खुदा की गाजरगिरे, अब भी सोहनपापड़ी वैंसी ही बनती है? लाहौल विला कूवत।”

दमयन्ती बोल पडती हैं, “बड़े भुलकड हैं ये। आज तक मुझे यह सब नहीं बतलाया।”

हैदर कुछ स्मरण करता है, फिर बोलता है, “आह! भला ये सब बातें भी बतलाने की हैं? मगर, मैं तो गोया वहक गया हू। दिवाकर भाई से मिलवाइए न। शादी के चौदह साल बाद मेरे बाँस की बीबी की गोद भरी है। खुशिया मनाई जाने वाली हैं। हमने उनकी कोठी के अहाते में कुछ गाने, वजाने और नाचने का प्रोग्राम तय कर रखा है। अपने साहब में जब मैंने बतलाया कि दिवाकर मलिक मेरे छुटपन के दोस्त हैं, तो उनको यकीन ही नहीं हुआ। फिर यह भी बोल पडे कि ऐसे फवशन में दिवाकर मलिक जैसा डायर तो आने से रहा। उन्होंने गोया मुझे ललकार दिया। मैंने भी दबी जुवान से कहा—“अच्छा, तो सर, चैलेंज मजूर।”

दमयन्ती कहती हैं, “बहुत अच्छा किया आपने। मैंने इन्हे सैकड़ों बार कहा है—आदमी को लचीला होना चाहिए। तूफान के साथ चलने वाला गिर पडता है। जब तूफान चलने लगा हो, तब रुक जाना चाहिए। और हा, काम करके कुछ प्राप्त करने में भला क्या लाज? इस बखत हमें पैसों की मखन जरूरत है। कितना देने का तय किया है आप लोगो ने?”

हैदर बेचारा जैसे आसमान से गिरता है। कहता है, “ऐसा कह कर तो आप हिमालय को धक्के दे रही हैं। दिवाकर भाई यह सब सुनेंगे, तो उनको कितना बुरा लगेगा, खुदा ही बतला सकता है। आपने उनको मामूली आर्टिस्ट समझ रखा है क्या? ऐसी हम्तिया शोहरत का कफन

“ • ।” दमयन्ती मौन हो रहती है ।

घबड़ा कर हैदर पूछता है, “क्या दिवाकर भाई घर में नहीं हैं ?”

उत्तर में दमयन्ती का सिर धीरे से दो बार दाए-बाए हिल जाता है—
वम । हैदर अपने सूट की क्रीज पर निगाह डालता हुआ उठ खड़ा होता है
और बाहर निकल जाने का उपक्रम करता है । दमयन्ती एक कदम पीछे
हट जाती है । हैदर दरवाजे की ओर बढ़ता है और कहता है, “भाई बाह ।
आपने तो मुझे खूब मुशालते में रखा ।”

दमयन्ती अब भी कुछ नहीं बोलती ।

“जरा बोलिए तो सही, उनसे फिर कब मुलाकात हो सकती है ? मैं
फिर आने की कोशिश करूंगा ।” हैदर कहता है । परन्तु, ऐसा प्रतीत होता
है कि इम स्थिति में वह बेहद झुझला उठा है । निराशा और क्रोध, दोनों
के भाव उनके चेहरे पर एकसाथ देखे जा सकते हैं । फ्रण्ट लाइट इस
मिचुएशन में जान डाल रही है ।

दमयन्ती का मौन नहीं टूटता । वह बहुत ही धीरे-धीरे पीछे की ओर
खिचती जा रही है । हैदर रुक कर उत्तर की प्रतीक्षा करता है, फिर
दमयन्ती के कुछ न बोलने पर तमक कर बाहर निकल जाता है । परदा
गिरता है । लाइट बुझ जाती है ।

सरदार अमीरसिंह भाहे और काम मसे ही भूम पाए, मगर जब तक यहाँ रहता है मुख्तार म मत्वा टेकना नहीं भूमता । भजन-कीर्तन में भी घामित होता है और उसे बेख कर, आसानी से कोई यह नहीं समझना कि वह दूक झाइबर है । उसकी बातचीत म कहीं भी झाइबरपन मबर नहीं आता । कायद स बैठना कायवे से उठना और कायवे स बातें करना खूब जानता है । मुख्तार से सटी जो सड़कनुमा मसी है उसकी दूसरी मार उसने डाई कमरों वाला एक छोटा-सा घर किराये पर ल रखा है । इन मकान के मालिक भी कोई सरदारजी ही है । पहले इसमें एक मारबाड़ी परिवार रहता था । बा माई मी और एक बहन । ये बीना भाई यही मेन रोड पर घुड़ भी दबा करते थे । सरदारजी न उन्हें किसी तरह उबाड़ कर अमीर सिंह को बसा बिमा । उसकी हुई कि मया किरायेदार भा मया और वह सरदार है ।

गुरद्वार में स्कूम तो बन ही रहा था और रमोसाक प्रयत्न स कस्याभी को मौकरी भी मिस गई थी । मुख्य मुख्तार के प्राणन म जो मत्पन्त साफ-मुबार और पवित्र रहता था कोई-न-कोई उत्सव होता रहता । बेघ के कोने-कोने से सिस तीर्थयात्री बड़े मुख्तार का बखत करने आत तौ इन गुरद्वारे में भी पधारते थे । इन सोपों की छोटी दूरिस्ट बतें मक्सर मबर आया करतीं ।

नूरज का सामान मभी नहीं आया था इसलिये कस्याभी बच्चों को मात्र हारमोनियम के सहारे पक्के रातों में बंधे भजन यात्रा ही सिखसाने सपी थी । बच्चियां बच्चे कुब खि सेते थे । कस्याभी प्रेम से काम सेत्री भी ताड़ना से नहीं । जब कभी बाहर से आए हुए किसी ऐसे बिद्वान का भापय होता जो सिख धर्म और दर्शन में अपनी बहरी पीठ रकता था ता रमाभा और कस्याभी भी बड़े प्रेम से भापय सुनती । कुछ ही यहीनों म इन्हें निरु के मुदकों के आबर्त जीवम के बिपय में बहुत सारी बातों की न ।

गई थी। ऐसे ही मौके पर किसी शाम सरदार अमीरसिंह की निगाहे कल्याणी की निगाहों से जा टकरायी।

अमीरसिंह तो जैसे बावला हो उठा। उसके दिल ने कहा—‘हाय, यही तो है मेरे तसव्वुर की मलका !’

जवानी में बहुत सारे अनाडीपन होते हैं। मगर, सबसे बड़ा अनाडीपन यह होता है कि हर जवान दिल शारीरिक आकर्षण को मुहव्वत का बुखार समझने लगता है। शरीर पाने की वेचैनी को वह पाक मुहव्वत की तडपन समझने लगता है और यह मानने को हगिज तैयार नहीं होता कि उसकी इस उफान मारती हुई मुहव्वत में दो फी सदी भी मिलावट है। पचास कदम दूर बैठी हुई कल्याणी ने जैसे अमीरसिंह को इशारे से कह दिया, ‘अमीर, मैं तेरी सोहिणी हूँ। नज़रें न चुरा। आ, हम दो रूह मिलकर एक हो जाए।’

कहते हैं, प्रेम अन्धा होता है। पर, उस वक्त उसकी आंखों में शायद सौ सूरज की रोशनी आ जाती है, जब एक प्रेमी प्रेमिका को या प्रेमिका प्रेमी की तलाश में निकल पडती है। सरदार अमीरसिंह टुक लेकर कहीं दूरदराज जाने वाला था। मगर, अब रुक गया। उसने रमोला के साथ कल्याणी को गुरुद्वारेवाले स्कूल में आते-जाते कई बार देखा था। पर, आज तक न तो नज़रें मिली थी, न दिल की यह हालत हुई थी।

उसने पड़ोस की एक आठ साल की लडकी को ढूँढ निकाला और उसे लेकर स्कूल पहुँच गया। वह कल्याणी से इस लडकी के ही मुतल्लिक मिलना चाहता था। इस समय उसने एक अच्छा सूट पहन रखा था और उसकी पगड़ी जैसे कमाल कर रही थी। उसने कोट के ऊपर वाली जेब में एक वडिया फाउण्टेन पेन खोस रखा था और उसके रुमाल से एक प्रकार की मीठी-मादक सुगन्ध निकल रही थी।

वह पूर्व की ओर में दक्षिण की ओर चल कर, पश्चिम की ओर मुड़ा, जिधर सर्गीत-नृत्य सिखलाया जाता था। यह एक वडिया हाल था और यही उसकी भेंट कल्याणी से हुई। वह हारमोनियम पर दस-पन्द्रह वच्चे-वच्चियों को कोई ‘सवद’ गाना सिखला रही थी। सवदों का एक अच्छा संग्रह उसे गुरुद्वारा प्रवन्धक कमेटी के प्रेसीडेण्ट साहब ने खुद दिया था और

इसारा किया था कि बच्चों को आशिकाना प्रकार के गीत हगिज न सिखाए जाएं। उनकी बाता से यह भी माबूम हुआ कि वह थोड़ी-बहुत पैठ संगीत में भी रखते हैं। उन्होंने कहा था 'बहुत सारे भजन राम रागिनियों में बंध हैं। उनका रियाज करके भी बच्चे अच्छी आवाज के हुकदार बन सकते हैं।

"जी हाँ ऐसा ही कहेंगी। कस्याभी ने कहा था "मेरी दुनिया तो तुमसीबास के लिए विमय-यदों से शुरू हुई थी।"

सरदार अमीरसिंह उस हाल के दरबाजों पर जाकर लड़ा हा रहा। आठ साल की बच्ची समचार और कुरता पहने उसमे खटी बाईं आर लड़ी थी। पास जाकर कस्याभी ने पूछा था 'आप किस निमसित में आए हैं ?

'यह कुबी भजन-कीर्तन सीतेथी।'

कुबी माने लड़की।

मुम्बा माने लड़का।

इसके असावा पंजाबी बोमी के पचासो सभों के अथ कस्याभी जान गई थी। उसे कोई परेसामी नहीं हुई। उसने पूछा, 'यह यहां पढ़ती है ?'

"नहीं।"

कस्याभी ने कहा "यहां स्कूल में जा लड़की पढ़ती है उसे ही संवीत सिखाया जाता है। क्या इसके मां-बाप इस पढ़ाना नहीं चाहते ?

"वे तो नहीं चाहते। भगद, जानती है दोस्त सबे पाई से बढ़कर होता है।"

"मठलब ?"

सरदार अमीरसिंह ने कहा, 'इसका बाप मेरा दोस्त है। हम एक बाल में रोटियां खाते हैं। मैं चाहता था यह लड़की कुछ बने। इसकी आवाज बड़ी प्यारी है। मैं नहीं चाहता कि बुकान पर बैठकर यह पापड़ बेचने में महारत हासिल करे। इसका बाप इसकी सुबियों को नहीं पहचानता।'

कस्याभी इस बार सरदार अमीरसिंह की आंखों में आंखें डाली है। फिर कहती है 'ठीक है, आप इस पहल स्कूल में शामिल। उस ओर बसे जाएं। अखबिन्दर और हूड टीकर है।"

“वेहतर ।” कहकर अमीरसिंह ने, जिस ओर से आया था, उधर मुड़ना चाहा । फिर उसने वेहद मासूम आवाज़ में कल्याणी से पूछ लिया, “आपने कब मिलना होगा ?”

कल्याणी ने जैसे अनजाने ही उसका दिल तोड़ दिया । कहा, “अब मुझमें मिलना कोई जरूरी नहीं है । दाखिला लेने के बाद यह लडकी खुद इस क्लास में आने लगेगी ।”

“मगर जो मिल लू, तो कोई हर्ज है ?”

कल्याणी का उत्तर था, “देखा जाएगा ।”

देखा जाएगा क्या देखा जाएगा ? अमीरसिंह इन दो लफ्जों के ढेर सारे मायने लगाता हुआ चला गया ।

दो-तीन रोज़ अमीरसिंह छुट्टी के समय बाहर गेट के पास कल्याणी को नज़र आता रहा और उसे बड़े अदब से नमस्ते करता रहा । फिर वह ट्रक लेकर अमृतसर चला गया । जा रो दुनिया ! मुहब्बत के रास्ते में रोटी का सवाल भी क्या गुल खिलाता है । नमस्ते का उत्तर कल्याणी ने हर बार मुस्कराकर दिया था और उसकी हर मुस्कराहट अमीरसिंह को उसके दीव लानी गई थी । परन्तु, कल्याणी के अनजाने में यह सब हो रहा था । इस स्कूल में बहुत सारे सरदार जी आते रहते हैं । कोई बच्चे को दाखिल कराता है, तो कोई बच्ची को । इसी तरह कब और कौन-कौन कौर आती थी, हिसाब लगाना मुश्किल था । गुरुद्वारे की सीढ़ी पर जिसे रोज़-रोज़ मत्था टेकना नसीब हो, भला उसमें बडभागी कौन सरदार और कौन कौर होगी ? सरदारों की वीविया बच्चे-बच्चियों को छोड़ने या लीवा ले जाने आती, तो मत्था टेकना कभी नहीं भूलती थी ।

कल की सुबह चार बजे ट्रक लेकर अमीरसिंह को यह शहर कई दिनों के लिए छोड़ देना था । यह तो एक सयोग ही था कि आज की शाम कल्याणी उसे पास की उस दुकान पर मिल गई, जहा प्लास्टिक की चूड़िया खास तौर से बिका करती थी । अमीरसिंह ने पूछा, “कहिए, लडकी कुछ सीख रही है ? आवाज़ कैसी है ?”

कल्याणी ने कहा, “हा, सीख रही है । आवाज़ भी अच्छी है ।”

अमीरसिंह जैसे एकाएक बोल पड़ा, “मैं भी कल बाहर जा रहा हू ।

घायब पन्द्रह रोड बाद सौटू।”

“अच्छ।” कहकर कस्याणी ने एक बार अमीरसिंह को जी भर कर देखा था। इसके बाद बूधियों की डिंकाइन पसन्ध करने लगी थी।

सेक्रिट साइड कस्याणी को भी वैसा कुछ हो गया। आगे बढ़ जाने पर भी सना अमीर उसके पास ही बढ़ा है। दुकान-भासिक एक युवा सरदार था। बुद्ध हाथा ता घायब किसी बहाने कस्याणी पूछ बैठती—‘यह कौन है? और, ठन बूढ़ा सरदार एक-दो वाक्य में कुछ बतलाता। मगर, सवाल निरर्थक रहता ही नहीं था कि यह कौन है? इसका बाद पन्द्रह रोड और भी बुरे हुए थे जो हाथों से बाहर नहीं निकल पाते

‘यह कौन है जो रोड के अमर छावन का बाइस बन कर पुबल गया?’

इकन साइड, स्पीडोमीटर, बायस!

स्टियरिंग व्हील क्लच एक्सेलरेटर!!

भीड़-मझाका हॉर्न और ‘हटो-बचा’ की आवाजें!!!

यह सब कुछ एक ओर और कस्याणी का एक धरम ‘अच्छ’ एक ओर। ट्रक के स्टियरिंग व्हील की बरफपट्ट के साथ सरदार अनाउंसिंह का दिन भी बरबरा रहा है—उम ससवार, बुरा और भाइनी ने नद देते नर की देर है, कभी फौज चटक पड़ती। सरसा कर कह ‘अमीरसिंह, तू बढ़ा तो है’।

बमीरसिंह पचास से सौट कर आठा है तो फिर मूढ़... मिसला है। रमोना बीबी के पट में कोई राम हो गया है। राखिण है। घायब आपरेसन होया। हाथों का टूटन... सरदार अमीरसिंह सब पता लगा चुका है।

बुधार का मूक्य धार मन रोड की आर खुला है। ज... की मार है। वैम एक अक्ल-आसा रान्ना पूछ की कर... छटी-छगी बर्ष बुधारे है। जन्ही बुधानों में मे... पसन्ध करत नमक उम दिन कस्याणी का अर्थ... है।

हर सहर के मेन राड पर पहल-पहल रहती है। परस थी। बतान्य का मौसम। मथा चार बर... के...

मे अभी-अभी छुट्टी हुई थी और लडके-लडकिया उत्तर और पूर्व वाले फाटकों से भागते-कूदते, उछलते निकल रहे थे। मेन रोड पर सवारियों की भीड़ देखते ही बन रही है।

आज कल्याणी अपने को कुछ ज्यादा थकी हुई पा रही है। इच्छा होती है कि रिक्शे से घर लौटे। पर, मन आगे बढ़ता है और कदम पीछे हटता जा रहा है। नब्बे रुपये की नौकरी है। वह भी स्थायी नहीं। माहौल तो यह है कि छ-सात टीचरो मे जो दो गैरसिख टीचर हैं—रमोला और कल्याणी—अपने को स्थायी समझ ही नहीं सकती। लगता है, इन दोनों के सिर पर कोई दो अनजानी कौर लटक रही हैं। इधर कल्याणी ने सुना है, हरविन्दर कौर की भानजी लुधियाने से आई है। अभी उसका ब्याह नहीं हुआ है। वह हिन्दी की प्रभाकर परीक्षा पास है और सगीत मे उसने तीन साल की पढाई पूरी कर ली है।

कही रोटियों की छीना-भपटी न हो जाए ?

उसे नौकरी भी मिल सकती है, और शादी की बातचीत तो चल ही रही होगी। मगर, कल्याणी का क्या होगा ?

कल्याणी जब पहला वेतन लेकर घर गई, तो दिवाकर मलिक किसी काम से बाहर ही खड़े थे। कल्याणी ने कहा, “वावूजी, इधर आइए।”

“क्या है, बेटी ?”

“आइए न।”

और, जब दिवाकर मलिक बैठक मे आ गए, तो उसने उनके आगे दस-दस रुपये के नौ नोट बढाते हुए कहा, “यह रहे नब्बे रुपये। एक महीने का।”

दिवाकर मलिक ने नोटो को देखते हुए कहा, “जाओ, अपनी मा को दे दो।”

“क्यो, आप नहीं लेंगे ?”

“बिटिया के लिए मा और वाप दोनो बराबर होते हैं। जाओ, मा को दे दो।”

कल्याणी समझ नहीं पाई कि यह कहते हुए उसके पिता ने क्यो बड़े गौर से उसके मुखड़े को देखा था और क्यो उनके नेत्रो ने क्षण-भर मे आसू

उत्तम दिए थे। वह चुपचाप जीवन की ओर बढ़ गई।

पहाड़पुर स्टेट के बाबू साहब ने पिता नर्तकों और मायको का बड़ा सम्मान करने थे। एक बार उनकी भी इच्छा दिवाकर मलिक का अपने यहाँ मौकरी देने की हुई थी। दिवाकर मलिक ने क्रमसे अस्वीकारात्मक उत्तर भिजवा दिया था। ममा यह भी कोई बात है कि वह जब चाहें तब उनके आगे साधा जाए? उनके रिश्ते भी तो रजबाओ में ही हैं। वे सौमनाते रहते हैं। क्या पता उन्हें कस करने के लिए नाचने को कहा जाए? अब उनके सुपुत्र स्टेट के मलिक हैं। इन्होंने भी चाहा था कि दिवाकर मलिक उनकी पनाह कुबूस करें और दिवाकर मलिक ने फिर इस मौक को ठुकरा दिया। बसन्तपंचमी को उनके यहाँ बड़ी धूम म रास रव मचता है। मायक नतक नाटक आते हैं। सभी अपनी-अपनी कमाओं का प्रस्तुत करने हैं और सन्तोपजनक पुरस्कार प्राप्त कर घर मींगते हैं। हर माय की तरह इस साल भी बसन्त का मौसम आया था। दिवाकर मलिक का हर बसन्त पंचमी के अवसर पर बाबू साहब मुभाते के कुछ वनधाम्य भी भवित करते थे। इस बार भी दिवाकर मलिक वहाँ आम की ठियारी म थे। नृत्य का अपना सारा सामान महजठ और सोचठ—पहाड़पुर जाने के लिए कम इतने रोड रह आएंगे। वहाँ से इतने रुपये तो मिस ही आएंगे कि दो-तीन महीन किसी बात की चिन्ता नहीं रहेगी। कल्याणी को वेतन माएगी वह उसे ही देकर कहेंगे 'बेटी इनसे तुम अपन लिए कुछ धरीर सो। हाँ कमानर से आई हो न, मुझ पान-मुपाठी के लिए एक रुपया दे दो। तुम्हारा भी मन रह जाए कि अपनी कमाई से पिताजी को कुछ दिया।

लेकिन ऐसा हो कहाँ पाया? बेहया बनकर कहना पड़ा 'आओ अपनी माँ को ब दो।' पुत्री की कमाई से घर में राशन आएगा न! बसन्ती हिंसाळ बिठाएगी कि मध्य रुपये में क्या-क्या और कितना मा सकता है।

दिवाकर मलिक जैसे जिन्दा ही मर गए।

पहाड़पुर स्टेट से इस साल निमत्रण नहीं आया। बाबा माय बीतन का आया। ममावस्या तक यह हाल हो गया कि नजर पड़ते ही डारिने

रोककर दिवाकर मलिक पूछते, “मेरे नाम कोई चिट्ठी है ?”

“नहीं ।”

“देखिए, एक लिफाफा होगा ।”

“नहीं है, मलिक जी ।”

“जरा देखिए न । पहाडपुर स्टेट से पत्र आने वाला है ।”

लाचार होकर डाकिया बहुत सारी चिट्ठियों के बीच ढूढने लगता है ।

“पीले रंग का लिफाफा होगा । हर साल वसन्तोत्सव का निमन्त्रण

पीले लिफाफे में ही आता है ।”

और, थककर डाकिया होठ चिचका देता है ।

दिवाकर मलिक देखते रह जाते हैं । डाकिया आगे बढ़ जाता है ।

बैठक में आकर बालकृष्ण की मूरत के पास चारपाई पर हताश होकर यूँ बैठ जाते हैं, जैसे हसते-हसते किसी ने सारी खुशिया छीन ली हो । उन्हें

क्या पता कि किसी खुशामदी मुसाहिव ने बाबू साहब के कान में कह दिया था, “यह आदमी महाघमण्डी है । याद है न, श्रीमान जी ने दो-दो

बार दरवार में नौकरी कर लेने को कहलवाया, मगर वह अपनी शान में

तक नहीं करने आया । इसके बदले आप खेलाडीलाल को इज़्जत

शाए । राग जयजयवन्ती पर तो वह सगीत की त्रिवेणी वहा देता है—

आडा चौताला चौदह मात्रा । वाप रे वाप, श्रीमानजी एक बार उसका नाच देख लें, तो कहे कि हा, अपने इलाके में एक दूसरा रतन भी है ।”

फिर वह चौताला चौदह मात्राओं में बघे राग जयजयवन्ती की दो पक्तिया गुनगुनाया भी था

‘नाचत गति गिरघर गोपाल ।

छम-छम-छम छवि न्यारी ।’

और, बाबू साहब ने फँसला दिया, “ठीक है, तुम दिवाकर मलिक की कमी पूरी करने के लिए खेलाडीलाल को निमन्त्रण-पत्र भिजवाओ ।”

खेलाडीलाल मुसाहिव का अपना आदमी था । तय पहले ही हो चुका था—विदाई में दस आने खेलाडीलाल लेगा और छ आने मुसाहिव ।

कल्याणी सड़क पर आकर खड़ी हो गई है । आज रिक्शे से ही घर

लौट बस तो क्या हर्म है ? अगर, सिर्फ आज भर । रोड राइ होगा मही करेयी इतना मुकुमार बनने स काम नहीं बनवा ।

वहुत धीक है । कोई रिक्शा खामी नजर ही नहीं आता । कस्माधी सोचती है—भसा कम तक जाड़ी रहे ! अब धीरे-धीरे चमना बाहिए । अभी वैस अमीरसिंह उसके लिए फरिस्ता बनकर जा आगा है ।

‘आप घर जाना चाहती हैं ?’

‘हां घर ही ।’

‘क्या रिक्शे की तलाश में है ?’

‘जी’ ।

अमीरसिंह अकस से काम लेता है । कहता है, ‘यहा ता बरा मुस्लिम है । बो-डाई सौ बरम उम ओर बड़ जाइए । कोई-न-कोई रिक्शा मिल ही जाएया । उघर यहा जैसी धीक नहीं है ।’

कस्माधी कुछ नहीं बोलती बस पढ़ती है । सोचती है—रिक्शा नहीं भी मिलता तो घर जाने का रास्ता उघर स ही है । वैस बसनी बनी जाएयी ।

और सरदार अमीरसिंह आग-नीचे हाथा हुआ एक प्रकार स उमर साक ही हो लिया । कस्माधी बार-बार उम बनलियों स दगती । अब उमकी समय स यह राज मान गया ।

‘रिक्शा आगे मिल जाएया ।’

‘बच्छा ।’

‘मैं इमी मसी में खूवा हूं ।’

‘बच्छा ।’

‘बह पो अमुतसरी पापड़ बाब सरदार जी हैं न...’

‘मैं नहीं जानती ।’

‘संर, एक छाटा-मा बच्छा भी बनमा दग कि इमरी दु...’
 सी है ।’

‘बच्छा ।’

‘उमकी दुकान क सामन स ही दुकान स दग च हई हई है ।
 बती में समय पर एक मकान क बाइ दुकान स दग सई हई हई है ।’

का दरवाजा है।”

कल्याणी ने इस पर कुछ नहीं कहा।

चार-पाच कदम बढ़ने पर अमीरसिंह कहने लगा, “पहले साथ में मेरी माँ और छोटा भाई रहता था। अब दोनों में से कोई साथ नहीं। अकेला रहता है।”

कल्याणी लगातार चुप रही।

सरदार अमीरसिंह का खयाल था कि अगर इसे ये सारी बातें बुरी लगती, तो यह कुछ दूसरा रख अपनाती। मगर, वह तो चुपचाप सब कुछ सुनती जा रही थी। अमीरसिंह ठाट-बाट से काफी आकर्षक लग रहा था। लोगो की भीड़ तो घटती-बढ़ती रहती है। कुछ कदम आगे चलने पर इन दोनोंके पास लगा, भीड़ कतई है ही नहीं। अमीरसिंह ने कल्याणी के एकदम पाम में चलते हुए जैसे अपने दिल को निकालकर उसकी हथेलियों पर रख दिया। फुमफुसा कर कहा, “पजाव निकल जाना पड़ा। मगर मन वेहद उदास रहा। आपको भूलना खुदा को भूलने जैसा मुश्किल जान पड़ रहा था।”

कल्याणी ने जब इतना सुना, तो लगा, इस सरदार ने उसके ललाट, वालो और गालो को बड़े प्यार से सहला दिया। फिर भी उसने धीमे स्वर में पूछ लिया, “मगर, आप मुझे याद ही क्यों करने लगे?”

“भई, इम क्यों का जवाब मेरे पास नहीं है।”

“तो फिर किसके पास है? आप मेरे साथ-साथ चलते आ रहे हैं, देखने वाले क्या कहेंगे?”

“चाहे वे जो कह लें, मेरे दर्द में साझीदार तो हर्गिज न होंगे।”

“खैर, इन बातों से मेरा क्या वास्ता।” कल्याणी बोली।

मगर, यह वास्ता हुआ। सरदार अमीरसिंह को अदावत की जगह मुह्वत मिली। दुत्कार की जगह पुचकार मिला। दोनों एक-दूसरे के लिए कभी न खत्म होने वाली गजल की बन्दिश बन गए। अकेले में सरदार अमीरसिंह गुनगुनाने लगा

‘शाला जवानिया माणे, आखा ना मोडी पी लै, पी लै।

अखिया विच अखिया पाके, तोवा नु फाई लाके,

पिघली हुई जन्त पी लै, कलिया दी अजमत पीलै,

पी सी बो-बार बहाड़ जी सी जी सी
 दासा जवानिया माणे ।'

बकत ने दोनों को एकवचन से एक मोड़ पर सा कर सड़ा कर लिया ।
 स्कूम को अब कल्पानी एक दिन के लिए नहीं छोड़ सकती थी । वह तो
 अमीर की हीर बन गई थी वह रीझा बन गया था । उसकी मुहब्बत को
 पंख लप गए और एक सध्या सरकार अमीरमिह अपनी हीर को लेकर
 जास-बंदर जाने वाली रेल में बैठ गया । रेल चल पड़ी ।

वागेश्वरी को पुकार कर दमयन्ती ने कहा, “पूर्वी को भोला और सरसो के तेल वाली शीशी दे दे।”

“अच्छा।”

यह सब सुनते ही पूर्वी ने वायलिन उठा कर एक ओर रख दी। सोचा— अब मामान लाने जाना होगा, उठू। लेकिन क्षण-भर वीतते-न-वीतते उसका उत्साह एकदम ठण्डा पड गया। दुकानदार नज़र पडते ही कुछ यूँ देखता है, जैसे पूर्वी के रूप में कोई प्रेतनी या चुडैल उसके सामने आ गई हो और उसे मौका मिलते ही खा जाएगी। वह एक ओर चुपचाप खडी रहती है और वह पूछता ही नहीं कि क्या चाहिए। बाप और दो बेटे मिल कर दुकान चलाते हैं। दुकान बड़े मौके पर है, इसलिए ग्राहको की भीड इस कदर रहती है, गोया छिला हुआ पका आम पडा हो और उस पर ढेर सारी भक्खिया भिनभिना रही हो।

न जाने किस पण्डित से पूछ कर मा-चाप ने उसका नाम दमडीप्रसाद रखा था, जबकि वह लखपती था। चावल, दाल, तेल की आढत में पहुँचता, तो जुवान खोलते ही आढत के मालिक गद्दी पर से बोलते, “जयराम जी की, दमडी बाबू ! कहिए, चावल की कितनी बोरिया लदवा दू ? पजाब वाला गेहूँ और कानपुर वाली दाल आ गई है।”

दमडीप्रसाद कहता, “पहले भाव तो मालूम हो।”

“आपसे यही सब सुनना अच्छा नहीं लगता। हुकम करते चलिए। वह देखिए, सामने बैलगाडी खडी है। मोल-तोल न कीजिए। हम कभी घाटे का सौदा नहीं दे सकते।”

“हा, सो तो है।”

फिर जब जो चीज़ शीघ्र उपलब्ध हो, उससे स्वागत।

मिठाइया, लस्सी, पकौड़े, चाय, फल।

दमडीप्रसाद के बेटो के नाम जैसे सस्कृत-कोशो की महायता से रखे

यए है—उठम राकस नीसाम । इनमें राहुस बीम मान्न वा राहुग सोसह मान का और नीसाम तरह सास का है । ये तीनों अपने नाम का अर्थ किसकुल नहीं जानत । दमड़ीप्रसाद उन्हें हाक लगाता है—अरे राहुसबा! अरे रबेसबा अरे निसभबा । बहयह भी नहीं जानता है कि इनस स और तासब्य द में क्या अन्तर है । हा इतना बहु अशक्य जानता है कि मूने अकाम और महंवाई के पिल बनियों के लिए बूसरी-सीमरी तिरारी करीबने के दिन हाते है । साम भाभी की तरह वे आशक्य काय आपूर्ति बिभाग के अफसरों को खरीवते है और मामाम्य चाहका व मानन गमा फइकर रहते है—इम घन्वे में अब कोई सरखत नहीं रह गई । राम बड़ात है बड़ व्यापारी सामान छिपाकर वे रखते है और जनता हम छोटे छोटे लोगों का बदनाम करती है हमारे नाम गानियां निकामती है । मुझ बीत काम न तो उधर क रहत है न उधर क । इतने पिल पापइ बेमने के बाट में तो यही समझ सका हू कि सबसे अच्छा पछा नीकरी है । मक-मुकमान न कोई मतलब नहीं महीने की हरएक तारीख का बकाबक नाद !

माया इस बेचारे को सास में घा-सीन बार मुक्तिम स बकाबक नादों के दर्शन होते है । तीनों बटे महाजमी के काम में गुरु होने के लक्षण रहते है । सबने छोटा दासा नीसाम बसे सुतला कर बालता है मगर अकसर पैस लौटाते समय चाहका व हाथ पर चाटे सिक्के रखने से बाज नहीं आता । ऐसे ही होनहारों को बेसकर मानता पड़ता है कि बांस की बड़ में बांस बनमता है और मछली के बच्चों को तैरना नहीं सिखसाना पड़ता है ।

पूर्वी जब श्लोता और सरसों के तल की धीधी सेकर बैठन पार करने सभी ता दमयन्ती न अरा ऊंची आबाज में कहा "सेम की धीगी पूरी मरु सेना । बहु अकसर पूरी धीधी नहीं भरता । कहना यह आश किमो की धीधी है ही । इममें कोई काट-कपट न करो ।

'अच्छा' ।

पूर्वी बाहर निकमती है तो लगता है उस पर अकं की बारिदा होने सभी । वही जाकर एक मोर सड़ा होना दुकानदार की उपेक्षादृष्टि का सामना करना । बड़ा खानू है दमड़ीप्रसाद । दिवाकर मसिक ११ नहीं सेता, मगर मीठे-मीठे उम्ह कोसना बहु नहीं मूलता ॥

डकार तक लेने को तैयार नहीं होते। कहता है—“आढत पर चवन्नी-भर का सामान हमें कोई उधार नहीं देता और यहाँ जो लोग उधार ले जाते हैं, उन्हें याद ही नहीं रहता कि पैसे देने चाहिए। आखिर हमारे पास भी तो कोई कारू का खजाना नहीं है। अब तो मैं महीनेवारी उधार लेने वालों के भी आगे हाथ जोड़ने वाला हूँ।”

उसकी यह अन्तिम घोषणा पूर्वी के कलेजे को दहला देने वाली होती है। कुछ मानव प्राणी ऐसे भी होते हैं, जो जिन्दा रहने के लिए ग्लानि और हीनता की जड़ मीचने में ही अपने को निरापद और सुरक्षित समझते हैं और किमी तरह उनकी जिन्दगी कटती चली जाती है। इस अर्थ में कभी-कभी वे इतने जड़ हो जाते हैं कि वे भूल ही जाते हैं कि ग्लानि क्या चीज़ है, हीनता क्या चीज़ है। किन्तु, पूर्वी ऐसे प्राणियों में नहीं। इस छोटी उम्र में वह बार-बार अपने से सवाल करती है कि आखिर इस स्थिति में उबरने का रास्ता कौन-सा रास्ता हो सकता है ?

सम्भवतः वह दमड़ीप्रसाद की दुकान पर पहुँच गई होगी कि इधर बाहर में धूम-फिर कर दिवाकर मलिक लॉटे। प्रातः मान बजे ही निकल गए थे। अब दम बजे रहे थे। दमयन्ती ने जाकर दरवाज़ा खोला, तो देखा, 'वह' न तो उदास हैं और न प्रमत्त। लगता है, होठ गीले करने-भर को कहीं ने पानी मिल गया। पूछा, “आ गए ?”

“हा।” कहकर दिवाकर मलिक ने जिज्ञामा प्रकट की, “पूर्वी कहा है ?”

दमयन्ती बोली, “दमड़ी की दुकान में चावल और तेल लाने गई है।”

“और वागेश्वरी ?”

“वह स्नान कर रही है।”

दिवाकर मलिक कुछ उत्साह-भरे स्वर में बोले, “एक मित्र में दम रुपये मिल गए हैं ?”

“किमने दिये ?”

“भई, यह तुम हमेशा पूछा करती हो।”

“तो क्या हुआ ?”

“सबके नाम क्या तुम जानती हो ? किसी ने दे दिए, काम चलने से

मठलक । माओ घर में बसो ।”

“क्या बात है ?

दमयन्ती विभासा से भर उठीं । जब भी कहीं से कुछ भर्त्सनापि की आधा होती दिबाकर मलिक इसी टोन में बोलते और घर में जाकर मारी बातें तपस्वीम से बतलाते । बड़ी निरछसता से अपनी बातों में कुछ नमक-मिर्च भी मगा दिया करते, फलस्वरूप तत्क्षण धीमती के उदास मुरड़े पर आनन्द की सहारे खेलने लगती थीं ।

शयनकाल में आ कर दिबाकर मलिक चारपाई पर बैठे रहे । दमयन्ती ने भी अपने लिए एक कुछ-आसनी खीच ली और पति के पैरों के पास बैठ रहीं । दिबाकर मलिक ने कुरते की बायीं खेज से बस रुपये का एक मोट निकालकर पत्नी के हाथ में देते हुए कहा “मेरे दो दोस्त हैं न प्रकाश बाबू, तुमसे तो उनसे भार में कई भार” ।

दमयन्ती बोम पड़ी “हां-हां याद है ।”

दिबाकर मलिक ने बतलाया “सिखा विभाग के मन्त्री हो गए ।

“मन्त्री हो गए ?

दमयन्ती ने इस प्रश्न में दिबाकर मलिक को जैसे खर ठहर जाने के लिए कहा । बोम, “हो नहीं गए, मगर कल-परमों तक हो जाएंगे । उनके ही घर स आ रहा हूँ ।

“तुम्हें कैसे मामूम ?

“असवार में पडा है ।”

“हांन दो ।

“ऐसे क्यों बामती हो ? सिखा विभाग स मुझ जैसे आदमी का विभाग भी जुड़ा हुआ है ।

“तुम्हारा जैन-सा विभाग हुआ ? दमयन्ती ने आश्चर्य से पूछा ।

दिबाकर मलिक बोसे “मुझ जैसे मोगा का विभाग होता है—मलिन कला विभाग ; हमम मठक गायक नाचक और भिन्नकार आन हैं । प्रकाश बाबू कह रहे थे कि यह मर्तकों नामकों बादबाक लिए भी कुछ करेय । मुझे तो बड़ी खुशी हुई । बड़े हरियादिस इम्मान हैं प्रकाश बाबू ।”

इसी बीच पूर्वी आ गई । उसके हाथ का भोमा खाली था ०

की शीशी खाली थी। वह वरामदे में आकर खड़ी हो रही। उसका चेहरा कुछ इस कदर रूआसा नज़र आ रहा था, गोया कहीं से पिटकर आई हो। उसके पैरो की आहट सुनकर दमयन्ती ने आवाज़ दी, “कौन है? बागेश्वरी? स्नान कर लिया?”

ददले में पूर्वी बोली, “नहीं, मैं हूँ।”

“भामान ने आई? आओ, इधर आओ।”

चाँखट को लाघते हुए पूर्वी ने कहा, “उमने लौटा दिया।”

“क्यो, क्या कहा?”

“अब उधार नहीं चलेगा। मलिक जी को कहना, पिछला वकाया फौरन में पेशतर चुकता करे।”

सुनकर पति-पत्नी दोनों को धक्का लगा। दमयन्ती ने पूर्वी को दस रुपये का नोट देते हुए कहा, “लो ये रुपये। पैमे में ले आओ।”

पूर्वी ने नोट तो पकड़ लिया, मगर झोला और शीशी ज़मीन पर रख दी और आज पहली बार अवज्ञा-भरे स्वर में कहा, “अब मैं नहीं जाऊँगी।”

दिवाकर मलिक ने बड़े प्यार से कहा, “चली जाओ, बेटी। तुम्हीं तो मेरे हाथ-पाव हो। अब तो पैमे देकर सामान लेना है।”

“नहीं।”

“नहीं-नहीं क्यो कर रही है री?” दमयन्ती के स्वर में तीखापन भर आया। वह पूर्वी की ओर इस प्रकार बढ़ी, जैसे क्षण-भर बाद ही उमकी पिटाई कर देंगी।

और पूर्वी ने जैसे ज़िद्द ठान ली। वह शायद आने वाले हूर खतरे की चोट महने के लिए बाहर से ही तैयार होकर आई थी। उसके गाल लाल हो आए। उमने ज़ोर देते हुए कहा, “नहीं जाऊँगी, नहीं जाऊँगी, नहीं जाऊँगी।”

“और जो कोई दूसरा ले आवे, तो खाएगी?” दमयन्ती ने तनते हुए पूछा। पूर्वी ने फौरन जवाब दिया, “नहीं खाऊँगी” जा...।”

सट्-सट्-सट् सटाक्।

थप्पडो के चलने के साथ ही दमयन्ती का क्रोध उबल पड़ा। पूर्वी अकडकर खड़ी रही। कनाकार पिता से नहीं रहा गया। भीतर में दौडकर

बाहर निकल आए। बटी के सिर को कसैजे से चिपकाया उसके सिर पर हाथ फेरने लगे। बोले 'मेरी रामी बिटिया पर हाथ न बसाओ।

पता नहीं पूर्वी ने तब क्या सोचा। वह अपने आंगू पोंछती हुई भोपा और धीधी उठाकर दमड़ीप्रसाद की दुकान की ओर सपकठी हुई चल पड़ी।

कल्याणी किमकी हीर बन गई, इस सवाल का जवाब न तो दिवाकर मलिक के पान या और न दमयन्ती के पास। मुहुल्लेवाले शुरू में जहर पत लगाने की कोशिश करने रहे, बाद में वे भी शान्त पड़ गए। शान्त पड़ जाने का अर्थ यह नहीं कि उन्होंने किमी नैतिकता का परिचय दिया कि दूमर के परिवार की जन्मपत्री भन्ना क्यों पढी जाए, बल्कि दिवाकर मलिक चूँकि मुहुल्ले वालों के घरेलू मामलों में कभी दखल नहीं देते थे और भेंट मुलाक़ान हो जाने पर नपे-तुले शब्द बोला करते थे, अतः ज्यादा छेड़छाड़ करने का किमी ने साहस नहीं किया। मगर, कानाफूमी का प्राइवेट घन्ना तो लोग चलाने ही रहते थे।

दिवाकर मलिक अपनी कमजोरियों में परिचित थे, इसलिए उन्होंने स्वयं भी दर्द को पी लिया। पर, यह दर्द जड़ में समाप्त हो गया था, ऐसा नहीं कहा जा सकता। यदाकदा कल्याणी की याद कुरेद ही जाती। वैसे उनका भी यही विश्वास था कि कल्याणी ने किमी के हाथों में अपना हाथ डाल दिया होगा और उनी के साथ कहीं चल पड़ी होगी। हा, दमयन्ती कभी-कभी इतना ज़रूर कह डालती, "तुमने चुपके-चुपके उमे स्कूल की नाँकरी पकटा दी। यदि मैं जानती कि यह नव होगा, तो उमे एक दिन के लिए भी घर में बाहर न जाने देती।"

"और मैं जानता, तो भी उसे धक्के देकर भेज देता? ज़रा मोच समझ कर बोलो, भाई! मेरे लिए कल्याणी कोई छठी उगली नहीं थी, जहाँ रहे या न रहे, कोई फर्क नहीं पड़ना।" दिवाकर मलिक कहने लगे।

दमयन्ती को आभास हो जाता, पतिदेव को ठेस पहुंची है। वस भ्रम स्थिति को नभालती, "मेरी इन छोटी-मोटी बातों को दिल में न विठाय करो। यह मत समझो कि मैं तुम पर दोषारोपण कर रही हूँ। तुम्हारे ध्यान तो मैं मात जन्म में नहीं ले सकती। हा, कभी-कभी हूँ उठती हूँ उमे किस पर प्रकट करूँ? वस तुमसे ही उल्टी-सीधी बोल देती हूँ।"

और मनोमालिन्ध का मटमैसा झुजा दण्ड भर में छूँ जाता ।

इसी बीच दिवाकर भक्तिक से एक रात बसवन्ती ने कहा "इन्ने बोस्तों के बीच जाते हो बागेबारी के लिए बर की चर्चा क्यों नहीं बनाते ? बसवन्ती तो ऐसा है नहीं कि किसी बर का पिता तुम्हारे नाम और गुणा को सुनकर खुद चाहेगा कि बागेबारी उसकी पुत्रवधू बने । हम मित्रों के कान में यह बात डालोगे तो कोई एक तो नहीं बेधेगा-मुनेगा । बेटों में किसी राजा के घर जाएगी कोई मुसाहिब तो अपना डार छोड़ेगा ही । शाही ब्याह बिना चर्चा चलाए तब नहीं होता ।

पत्नी का कथन दिवाकर को कटई घुरा नहीं गया । बाले 'ठीक कहती हो । भक्ति कई बार मोचता है हाथ छापी है । शाही-ब्याह बुबानी तो तब होता नहीं । मान लो मन के बायक बर मिल जाए, फिर ता पैसों के अभाव में हाथ मजकूर ही रह जाना पड़ेगा ।"

"भयवान सबसे मामिक है । जब कोई खुद बोझ डोना चाहता है तो दूसरे भी हाथ लगा देते हैं । भयवान खुद तो मामन भाकर कुछ नहीं करत मगर दूसरों के हाथ से करा देत है । दमयन्ती ने कहा ।

दो बार भयवान का नाम सुनकर आज न जाने क्यों दिवाकर भक्ति एकाएक नास्तिक बन बैठे । कहने लग देखो दमयन्ती भयवान और श्रोतिणी—इन दोनों से मेरा विल बहुत बबडाता है । इन दोनों के बरकर में न पड़ा जाए, वही अच्छा । भयवान की कल्पना मनुष्य ने की मनुष्य तब कल्पना से मुक्ति भी पा सकता है । वह किसी के साथ पर कुछ नहीं करता । अपने ही किए सब होता है । आबमी पीड़ा भोयता है तो क्यूँ है—भयवान किसी पाप का दण्ड बे रहे हैं । मगर पुरस्कार की बात भी लो । मैं दो-तीन बड़े-बड़े भयवधुभक्तों को देखा है कि बिल्ली भर बे देवताओं के पीतल के आसन को छोते रहे, बसिया में पूजन-अर्पण की सामग्रियों लिए मन्दिरों की सीढ़ियाँ गिरते रहे । इनमें से किसी का बवान बेटा एन्सिडेष्ट में मारा गया किसी के बर में आग मय गई, कई बान-वान का मोहताब हो गया । एक महिला तो पूजा करने के लिए ही फूल तोड़ने गई और इस कबर गिरी कि मल पृछा । पता नहीं पहले तो प्यस्तर पड़ा बाद में उसकी एक टांग ही काट बी गई । पता नहीं, भयवान जिन-

छिपा मुस्कराता रहा या रोता रहा। ये ज्योतिपी भी कुछ कम जालिम नहीं होते। हरदम दोहरी बातें बोलते हैं। ताल ठोककर एक बात पर बैठक नहीं सकते।”

मुनकर दमयन्ती ने कहा, “मुनो, मैं जानती हूँ कि भगवान से तुम डरते हो, मगर ये मारी बातें क्रोध में बोल रहे हो। दिल जलने पर माताएं अपने बच्चों तक को शाप दिया करती हैं, लेकिन क्या वे हृदय से चाहती हैं कि बच्चों के जीवन पर वे शाप फलीभूत हो? उद्धव के आने पर गोपिकाओं ने मुरलीधारी श्रीकृष्ण के प्रति कितनी कटु बातें कही थीं, परन्तु क्या उन्होंने उन्हें हृदय से निकाल दिया? श्रीकृष्ण स्वयं द्वारकाधीश और रुक्मिणी के पति बनकर राधा को मूल सके? सारे ससार का जो स्वामी है, उसे कुछ जलाहने भी सुनने ही पड़ते हैं। हम दुःख में भटक भी तो जाते हैं।”

दिवाकर मलिक को जैसे किमी ने अघेरे से उठाकर उजाले में बिठा दिया। बोले, “अच्छा देखो, मैं कल ही से शादी की चर्चा तेज करता हूँ। सबसे पहले चार बानू से।”

“चाहे जिम बानू से कहो, मुझे कोई एतराज नहीं। क्या पता, किसके बहाने यह यज्ञ प्रारम्भ हो और किमके सहारे पूरा हो जाए!” तब दमयन्ती ने कहा।

अभी कचहरी पूरी तरह नहीं खुली है। मगर, सभी मजिस्ट्रेटों और जजों के पेशकार आ गए हैं। घण्टा-भर लगेगा, तब कचहरी में पूरी चहल-पहल छा जाएगी। बकालतखाने में सारी कुर्सियां नहीं भरी हैं। काले कोट वाले में से भी सब-के-सब नहीं आए हैं। पेड़ों और शेडों के नीचे बैठकर अजिया टाइप करने वाले आ गए हैं। उनमें से कुछ की मशीनें चलने लगी हैं। मुकदमेवाजों में से कुछ आ गए हैं, कुछ आ ही रहे होंगे।

चारुचन्द्र जी ने कहा था, “कचहरी की इमारत तो दोमजिला है, मगर सबजज नम्बर तीन नीचे ही बैठते हैं। पश्चिम ओर का दूसरा नम्बर इजलाम। इनका ही पेशकार है मणिकान्त दुवे। सावला रंग और अच्छी कद-काठी है। लोग अजिया थमा रहे होंगे। किसी भी इजलास में

हाकिम और पेसाकार नहीं छिपते। आसपास खड़े हो जाइएगा। फिर हम सोम भाग मनाह करेंगे।

दिवाकर मलिक यही छद्म रूप में आ गए हैं। मलिकान्त दुबे से कुछ बोलना-बालना यही है। दाम्प-सूरत देख मनी है बस।

ता यही है मलिकान्त दुबे।

मुसी भाग हैं, खुद मुखविकस भाते हैं। अजियां पकड़ाते हैं और अर्जी के साथ कोई मबा छपया घना है कोई-दो रूप्य। कोई तीन छपये और कोई पांच तक का मोटा बभान में भी नहीं हिचकता। मुखविकसों की भाषा पेसाकार समझता है और पेसाकार की भाषा मुखविकस। मयट, बढीसों का मुसी भी एक ही बिडीमार होते हैं। कभी-कभी के पेसाकार का भी खूना सया बेत है। समी तारीक इसबाने के लिए मुखविकस से पांच छपये बसूलते हैं और पेसाकार साहब का दो रूपये बमाठ हुए कहते हैं। अब बाई महीने भाग की तारीक शामिल। मुखविकस भाग भाया ही नहीं। यह स्तूरी में अपनी जेब से पै रखा है। अजी पेसाकार साहब मुखविकस तो मुकामा निपटम के बाव कभी बसंन नहीं देते। हम लोगों को ता एक ही साथ मरना और एक ही भाग जीना है।

पत्र साहब के आते-आते मलिकान्त दुबे का भाव्य न जैसे रेघमी चारद भोड़ सी। दण्डे-भर में उसने तीस-पैंतीस रूप्य छ कम जेब का इबाम नहीं किए हों। बरामदे में आकर बह एक बीड़ी मुतयाता है और बीड़ी सत्त होने ही अपनी मज के पास मिलित संभामन मयता है।

ता यही है मलिकान्त दुबे। दिवाकर मलिक ने देख ली उसकी माटी आमरनी—बागवधो बूझों महाभयी, पुतां कयेबी—बाद बाहु ने ठीक कहा था।

फुटलाइट जल रही थी। हज़ारों सम्भ्रान्त नागरिक दिवाकर मलिक का नृत्य देख रहे थे। लगता था, कोई पलकें गिराने को तैयार नहीं है। नृत्य का यह आयोजन राजभवन के पश्चिमी प्रागण में किया गया था। नगर के गिनेचुने लोग दर्शक थे—बड़े-बड़े वकील, डाक्टर, लेखक, पत्रकार, मन्त्री। हल्ले-हुडदगे की कोई सम्भावना ही नहीं थी। माननीय राज्यपाल जी स्वयं कई मन्त्रियों के साथ आगे बैठे हुए थे।

यहाँ आए कुल पाँच माह हुए और नगर का प्रायः हर बुद्धिजीवी जान गया कि इस बार जो सज्जन गवर्नर हो कर आए हैं, स्वयं एक अच्छे कवि हैं और कवियों-कलाकारों का बड़ा सम्मान करते हैं। कवियों-कलाकारों से बातें करते समय वह 'गवर्नर' नहीं रह जाते और उन्हें विदा करते समय कहा करते हैं, "आप यह मत सोचें कि मैं आपसे कुछ अलग हूँ। गवर्नरी क्या है साहब? यह तो एक नौकरी है। आपने अपने क्षेत्र में महान साधना की है। मेरी गवर्नरी तो किसी भी समय जा सकती है, पर आपकी उपलब्धियाँ सदैव बरकरार रहेंगी। पुनः दर्शन देने की कृपा करें।"

राज्यपाल जी स्वयं नर्तक नहीं, पर नृत्यकला को समझने की तमीज़ रखते हैं। पेशे से राजनीति में रहे हैं, पर हृदय कुछ और ही है। चाहते हैं, मुल्क के किसी भी कलाकार को रोटी की समस्या का सामना न करना पड़े। ये रोटी की समस्याएँ सुलझाने लगेंगे, तो फिर साहित्य और कला के लिए समय कहाँ से दे पाएँगे? यह सरकार और समाज का दायित्व है कि इनके संरक्षण का दायित्व अपने ऊपर ले।

राजभवन का पूर्वी प्रागण भी विशाल है। अभी यहाँ सैकड़ों कारें खड़ी हैं। दस-बीस गार्ड इन कारों के चारों ओर घूम रहे हैं। उनके कन्धों से बन्दूकें लटक रही हैं। चारों ओर रोशनी ही रोशनी! मगर जो भी आता है, पश्चिमी प्रागण की ओर ही भागता है। सन्तरी किसी को नहीं रोकते, क्योंकि यहाँ आने वाले सभी आमंत्रित हैं। सम्भ्रान्त हैं, सस्कृत हैं,

बुद्धिजीवी हैं। पचासों महिमाएँ और युवतियाँ भी आई हैं। इनमें से कई मृत्यु-मायन और वाचन कला में एत हैं।

मगर आ रे दिवाकर मलिक !

आज की इस महफ़िल का तू साज़ी बन गया है।

साज़ी क्या बन गया है कुवा बन गया है। तेरा स्वास्थ्य भीतर-ही-भीतर टूट रहा है तेरे दिल में एक प्वाभामुसी घड़क रहा है और तू है कि इन सारे दर्शकों के बीच बसन्त का सर्वोत्कृष्ट आनन्द बाँट रहा है।

दिवाकर मलिक का मृत्यु पक्ष रहा है। वह मौन होकर नाच रहे हैं। दीर्घों में बड़े चुचक ही दर्शकों से बातें कर रहे हैं

‘डुम छ न न न न न !

भूम भून न न न न !’

साट साहब की बाईं ओर राज्य के विशामन्त्री प्रकाश बाबू बैठ हुए हैं। साट साहब की आँखें खुली-की-खुली रह जाती हैं। यह हाड़-मांस का बना हुआ एक अठना इन्सान दिवाकर मलिक है या साक्षात् भरत मुनि का बेटा ?

ये लोड़े ये मुकड़े ये परल ये टुकड़े।

यनायन्त ‘तामेई’ का—

घिन ना।

कत तेटे घिनबिन नाकत

तेटे तिन कतता

तिनकत तातिन कतता।

टुकड़ा तामेई किटतक का—

धातिर किटतक

तिरकिट तकतिर किटतक

तुमा किटतक

तिरकिट तकतिर किटतक।

‘हाय हाय !’ साट साहब पाम बैठ

कहने लगते हैं— ‘कुछ मोट किया प्रकाश बाबू

प्रान्त की कमाबिभूति है। हय है—बह

जिस मात्रे पर तवलची उगली उठा देता है, दिवाकर जी वही पर तिहाई मार कर मम पर आ जाते हैं। आपको मालूम है न कि तिहाइया आमतौर से वधी होती हैं? हर मात्रे से भी तिहाइया वध सकती हैं, पर इस कदर नाच चल रहा है और यकायक आपने उगली उठाई और वही से टुकड़ा तैयार। यह तो लय पर असाधारण नियन्त्रण का परिचायक है 'देखिए, देखिए, उम नृत्य के जादूगर को '।"

मगर, सब वेकार !

प्रकाश बाबू उर्फ सूवे के शिक्षा मन्त्री मुस्कराकर रह गए।

यह आदमी शिक्षा और कला-संस्कृति मन्त्रालय का मन्त्री है। इससे पहले वकील था—दिन-भर 'हुजुरेआला' और 'योर ऑनर', 'योर लॉर्डशिप' का नारा लगाता रहा है। अपने पुश्तैनी गाव से शहर तक वकालत के अलावा राजनीति के गन्दे खेल खेलता रहा है। यह साहित्य और नृत्य की आत्मा को भला क्या पहचानेगा? लाट साहब के प्रशंसा-सूचक कथन पर यह अपनी ओर से कोई टीका-टिप्पणी नहीं कर सकता, इसलिए मुस्कराकर रह गया। गोया कहना चाहता हो—मुस्कराकर ही मुझे अपनी इज्जत बचाने दीजिए। आप बड़ी वेढव बातें कह रहे हैं और उनमें से एक भी मेरे पल्ले नहीं पड रही है। भगवान भला करे शिक्षा विभाग के उन अफसरो का, जो मेरे भाषण लिख देते हैं और मैं कोठरी बन्द कर उन्हें रट लिया करता हू।

नृत्य करते हुए दिवाकर मलिक ने देख लिया था कि प्रकाश बाबू और लाट साहब में बातें भी हो रही हैं। और उन्होंने कल्पना कर ली थी कि दोनों उनके ही वारे में चर्चा कर रहे हैं, क्योंकि दिवाकर मलिक एक बहुत ही अच्छे नर्तक हैं, अब यह कहने की आवश्यकता नहीं रही। आवश्यकता तो इस वान की रह गई कि उनके लिए कुछ किया जाए।

पन्द्रह मिनट का इण्टरवल।

दर्शको को बाघे रखना है। पूर्वी वायलिन लेकर मंच पर आती है। कोई आकर कह जाता है—अब आप महानुभाव थोड़ी देर के लिए इस वच्ची का वायलिनवादन सुनिए। सुयोग्य और साधक पिता की पुत्री पूर्वी मलिक !

तीन मिनट बीतते-बीतते पूर्वी ने राय जयजयवन्ती को जवामी पर ला रिया है। कभी-कभी तो इतना धीरे हाथ चसाती है कि सपना है आबाज सो गई है और फिर आबाज नाम पढ़ती है। द्यूसन के खरिये या स्क्रूम-कामेजी में बाघबादन सीख रही घन्ना सेठों की पाउडर भीम छप बेटियां भीतर-ही भीतर लम्बित हो उठती हैं। इन सबों की कसार्नों को पूर्वी ने जैसे एक ही झपट्टे में उठा कर कहीं और फेंक दिया है। मगर, एक बात है। उनको संगीत सिखानाने वाले मैट्रिक पास कर रहे हैं।

उधर परदे के पीछे पोशाक बदलते हुए दिवाकर मसिक कल्पना और यशार्थ के झूने पर झूमते हुए सोच रहे हैं।

लाट साहब ने कहा, 'मुझे हो-एक लोगो ने बतसाया है कि दिवाकर मसिक आधिन दृष्टि से बड़े कष्ट का जीवन बिता रहे हैं। कुछ सोचिए कि इनके लिए हम लोग क्या कर सकते हैं।

'सोचा जाएगा। प्रकाश बाबू इतना ही कहते हैं।

मन्त्री का इतना कहना ही काफी है—दिवाकर मसिक का विश्वास है।

एकाएक सारी बलियां बुझ जाती हैं। एक-एक बर्सक की आंखों पर काली पट्टियां चढ़ जाती हैं। ये सब अपने साथ पता नहीं, क्यों एक-एक काली पट्टी सेकर आए हुए थे। एकबम सान्ति छा जाती है। कभी-कभी संवरियों के बूटों की धमक सुनाई पड़ जाती है। फिर माटक बालू हो जाता है। स्टेज पर एक बड़ी-सी योत मेज। मेज पर दो नुसबस्ते सजे हुए हैं बानों और एक-एक कुर्ती। एक पर लाट साहब और दूसरी पर सामनीय रिता मन्त्री।

लाट साहब पूछते हैं, "क्या कलाकारों के सहायतार्थ जिस काय की स्थापना हमने की थी उसमें खर्चों का अभाव है?"

मन्त्री महोदय उत्तर देते हैं 'अभाव नहीं है। पर कोष में और रुपये चाहिए।

'इसके लिए तो आपका विभाग ही कुछ करेगा न?"

"हां।

“तो आप सेक्रेटरी से फाइल क्यों नहीं मागते ?”

“मागूंगा ।”

“अब तक माग लेना चाहिए था । देखिए, बात ऐसी है कि आप लोगो ने मुझे उस कोप का अध्यक्ष बनाया ज़रूर है, मगर सारी चुटिया तो आप पकड़े बैठे है । उस कमेटी के वरिष्ठ मेम्बर आप हैं । आपके विभाग के कमिश्नर हैं ।”

“हा ।”

“इतनी देर होती है । क्या मैं बदनाम न होऊंगा ?”

“श्रीमान जी, इसीलिए तो हम लोगो ने अनुरोध किया था कि आप अध्यक्ष बन जाइए ।”

सुन कर लाट साहव मन्त्री महोदय का मुह देखने लगते हैं । पीठ के पीछे थोड़ी दूर पर खड़ा अगर्भक जैसे ऊब रहा है ।

“भाई, आप लोग भी गजब करते हैं ।”

“ऐसे गजब रोज़ हुआ करते हैं ।”

“मैं तो चाहता था कि उस कोप से हर माह कोई निश्चित रकम दिवाकर जी को मिला करे ।”

“यहा दिवाकर जी जैसे जाने कितने हैं ।”

“मैं तो बाहर का आदमी ठहरा, मुझे क्या पता ।” लाट साहव बोलते हैं ।

प्रकाश बाबू का कहना है, “इसीलिए तो सब कुछ हम लोगो ने अपने हाथ में रखा है । आपको सिर्फ़ दस्तखत करने के लिए अध्यक्ष बना दिया गया है । हम लोग यहा के हैं और हम जानते हैं कि यहा का कौन-सा साहित्यकार, कलाकार किस खेमे का है । कौन किस पार्टी का हिमायती है ।”

लाट साहव अपना सिर थाम लेते हैं, “तो क्या सांस्कृतिक विकास के निमित्त स्थापित कोप के मामले मे भी आप लोग राजनीतिक दूरबीन से काम लेते हैं ?”

“और नहीं तो क्या ।”

“यानी आप सभी राजनीतिक कछुए हैं ?”

मन्त्री महादय आर्जे तरेर बैठल हूँ। कहत हूँ “गवर्नर होमे क नाते आप हमारे निर्णयो पर बस्तखत करने के लिए बाध्य हूँ। आप हमारे कामों और रबैये में दखलमन्गी नहीं कर सकते। आपका मामूम होना चाहिए कि आप एक जपपसी का तबादला तक नहीं कर सकते हम चीफ सेक्रेटरी को अपने कस में बुसाकर फनीहूत कर सकते हूँ।”

साट साहब जैसे आत्मसमर्पण करने के मूड में आ जाते हैं। कहते हैं “मैं इस तरह की भाषा नहीं बोल सकता। मैं अपने पद की मर्यादा जानता हूँ। मगर, एक बूढ़ साहित्यकार मुझसे मिले थे। उनका नाम चारुचन्द्र है। उन्होंने मुझे बतसाया कि दिवाकर जी ने जपमी क्रिया का बिबाह समभग ठय कर रखा है। उषी के खर्च के लिए उन्होंने आबेदन पत्र दिया है। तीन माह से पमावा हा गए।

मन्त्री सापरवाही से उत्तर देते हैं “हो गए होंगे। मैं आबेदन पत्र डायरेक्टर के पास होते हूँ। नीचे से सब कुछ पक-पकाकर ही तो मेरे पास जाता है।”

“बह तो है। लेकिन यह इमाम साहब का बिपड़ा कब पकेगा ?

‘आप परधान न होइए। डायरेक्टर चीफ मिनिस्टर का नावमी है। मैं उसे बुसाकर डाटूना तो मग्निमन्धस से हटा दिया जाऊंगा। दुनिया का नियम है—पहले हम घर में दिया जलात है फिर मस्जिद में। बह डायरेक्टर चीफ मिनिस्टर के चुनाव क्षेत्र का है। उसके हाथ में तीन हजार भाट है।’

“और दिवाकर मलिक के हाथ में ? साट साहब पूछ बैठते हैं।

‘मुश्किल से तीन।’

साट साहब सिर झुका कर कुछ सोचने लगते हैं। फिर कहते हैं, “मन्त्री महादय, हम लीज खर्च में कुछ कटौतियाँ करें और जो रकम बचे उस” ।

प्रकाश बाबू बाठ काट देते हैं “इसका आदेश विभागीय प्रमुखों को दे दिया गया है। कम दरमों के पत्रोत्तर में आधा पेज खर्च करें। उर-उर दफ्तर में झड़ू न सयबाएँ, बरना झड़ू पिल बाएया और नया स्ट्रू खरीदना पड़ेगा। फाइलों पर जमी धूलें सात-अर में सिर्फ एक बार झाड़ी

जाए। कागज़ और लिफाफे की बचत के लिए पब्लिक के आवेदन-पत्रों के उत्तर न दिए जाए। जिसे गरज होगी, खुद दफ्तर का चक्कर लगाएगा। ठीक है न, सर ?”

लाट साहब उर्फ सर अपने ए० डी० सी० से कहते हैं, “सरदर्द की एक गोली लाओ।” और मन्त्री जी से प्रार्थना करते हैं, “इससे काम नहीं चलेगा। हम लोग उद्घाटन करना छोड़ दें। यह धन्धा मुझे पसन्द नहीं। इसमें सरकारी कोष का बहुत बड़ा अंश निकल जाता है।”

“आप छोड़ सकते हैं, यह धन्धा छोड़ना हमारे वश की बात नहीं। यह गंगा बहती रहेगी और हम हाथ धोते रहेगे।”

“इस काम में समय भी तो बरबाद होता है। आप ज़रा हिसाब तो लगाइए कि साल-भर में प्रत्येक मन्त्री का औसत कितना समय उद्घाटन-समारोहों में लगता है। फिर सुरक्षा व्यवस्था पर कितना खर्च आता है। मेरे खयाल से इन खर्चों को बचाकर हम लोग दिवाकर मलिक जैसे सैकड़ों साहित्यकारों-कलाकारों का कल्याण कर सकते हैं। समय की बचत होगी। उसमें आप फाइलो को देख-पढ़ सकते हैं। क्या खयाल है आपका ?”

“सर, उद्घाटन-समारोहों में ही तो हम लोग अपनी राजनीतिक भंडास निकालते हैं। यह काम सेक्रेटेरियट में बैठे-बैठे भला कैसे हो सकता है ?”

“अब आप जो कहे, मैं तो अपने कोष से दिवाकर मलिक को अवश्य कुछ दूंगा।”

“दीजिए, मगर ज़रा अपने सेक्रेटरी से पूछ लीजिएगा कि आप इस अधिकार का प्रयोग किस सीमा तक कर सकते हैं। ये नाचने-गाने वाले और कविताएँ करने वाले ज़माने से परेशान रहे हैं। हम तो अपनी स्थिति बदलने के लिए चुनाव लड़ते हैं, इनकी स्थिति बदलने के लिए नहीं। लेकिन अब तक बीसियों कलाकार मुझसे माला पहन चुके हैं।”

इसी समय अग्रक्षक अपनी बाईं कलाई लाट साहब के सामने कर देता है और निजी सचिव आकर सूचना देता है कि विरोधी दल के नेता आ गए हैं। उन्हें समय दिया गया था।

सुरेश पाठक का यह तर्क दुवे जी को दु खी कर गया। कुछ झल्ला कर बोले, “छोड़िए, आपको इन बातों में पढ़ने की जरूरत नहीं। आप मकान खाली कर दीजिए। रिश्ता किरायेदार और मकान-मालिक का है, और आप हैं कि पट्टीदार की तरह बहस कर रहे हैं।”

सुरेश पाठक ने दुवे जी को चिढ़ाने की कोशिश करते हुए कहा, “आप दूबकर पानी पीते हैं, दुवे जी। सच बोलिए, आपके सुपुत्र अदालत में लिखकर देंगे कि मैं उनका किरायेदार हूँ और किरायेदार के रूप में डेढ़ कमरे का किराया नब्बे रुपये वसूलता हूँ। इसमें विजली का खर्च शामिल नहीं है।”

दुवे जी ने छूटते ही कहा, “अदालत का नाम क्यों लेते हैं? जब कमरा दूढ़ते फिर रहे थे, तब अदालत की याद नहीं आई थी? अदालत .. अदालत आपने मुझसे ज्यादा कोर्ट-कचहरी नहीं देखी होगी। अदालत सच बोलने के लिए नहीं है। और हम पहले क्यों अदालत जाएंगे? आपको जाना है, तो आप आगे-आगे चलिए। हम आपके पीछे-पीछे आएंगे।”

सुरेश पाठक मूस्करा पड़े। बोले, “आप इतनी जल्द तेवर बदल लेंगे, दुवे जी, मैं नहीं जानता था। मैंने तो ऐसे ही कह दिया। मैं सेण्ट्रल गवर्नमेन्ट की सर्विस में हूँ। मेरा तवादला कभी भी हो सकता है। मुझे अदालत से क्या लेना-देना। रही बात मकान खाली करने की। प्रयत्न करूंगा, और आप महीने-भर की बात कहते हैं, मुझे एक सप्ताह में कहीं घर मिल जाए, तो मैं आठवें दिन आपको हाथ जोड़ दूँ।”

“खैर, तो मैं ज़बरदस्ती आपको रखूंगा भी नहीं।”

“ठीक है। आप परेशान न हों।”

दुवे जी ने बात बढ़ानी चाही, “हम लोग ऐसे ही लोगों को रखते हैं, जो पहली तारीख को किराया देने लायक हों और ऐसी नौकरी में हों, जिसमें तवादला होना जरूरी हो। समझें न?”

“हां, समझ लिया। अच्छा ही करते हैं। किरायेदारों का उद्धार करते हैं, गरीब पिता की कन्या का उद्धार करते हैं वाह, खूब। मकान में पाव डालने से पहले पेशगी किराया और मैट्रिक पास बैठे पर दस हजार नकद देहेज! दुवे जी, इस कलिकाल में आप एक जाली देवता हैं।”

सुरेस पाठक के दिम में जाने क्या आया कि रौ में ऐसी बातें बोलते बसे गए, हाताकि ऐमा मुनागे का उनका कोई इरादा कतई नही था।

चार सास की मीकरी में मणिकान्त पूरा आसु टाहप का इम्मान बन गया था। पढ़ाई-लिखाई में वह कमा था उनका हृदय ही आनता होमा, मगर हमाने के अनुसार उनने पत्थर पर दूब जमा सी थी। सोभाकान्त दुबे ने होश संभालते ही पेनेपर मबाह का घग्घा पकर अपना सिमा था मगर इस पेदे को भी क्या कहा जाए। मरक में लाइन लगी थी। किमी रौब तो बस-यन्त्रह स्पये तक भ्रष्ट मान और कभी चार-पांच दिनों तक इमसी नीम और पीपल क बुल के नीचे दिन-भर बकटर लगाठ रह जाठे और कोई दिन बाला मूषकनी लाने में भी साम्बीधार बनने को नहीं कहता था।

जमाना भी क्या-क्या रंग बदलता है। कोई बकल था अब किमी झूठे की तलाघ करनी पड़ती थी अब ऐसा बकल था अब मच्छ को डूडना पड़ता था। झूठी गवाही देने क लिए एक-से-एक अवियाईतास बदासत के बहाते की महिमा बङ्गाने लम थे। लेकिन चाहे जो हो मणिकान्त ने तीसरी बार में बई डिबीजम मे मेट्रिक पास कर ही लिया। मट्रिक क्या पास कर लिया भरी बुपहृपी में मूरज क भाये पर खाभी पांच उतर गया।

बाबू बाबू भी मणिकान्त के परिवार के बिपय में क्यादा नही जानते थे। सोभाकान्त दुबे म कहीं साधारण परिचय हो गया था और तब से राह में आते जाते भेंट-मुभाकात हो आया करती थी। बाबू बाबू की भावण भी नहीं थी कि किसी की पारिवारिक बातों को छेड़-छड़कर पूछे। साधारण यपसप में मालूम हुआ था कि दुबे जी का पुत्र मणिकान्त अब सबबज का पेसधार हो गया है और तनदबाह के अभावा कुछ अयरी आमदनी भी हो जाती है। भाठ स्पये बतनमे कट तो जाते हैं मगर मज का सरकारी क्वार्टर मिस गया है। उन्हें यह नहीं मालूम था कि सोभाकान्त दुबे पहले अवामत में पत्रपर गवाह का काम कर जाजीविका बसाते थे। उन्हें यह भी नहीं मालूम था कि सरकार से मिसे क्वार्टर के आधे हिस्से मे उसने किरायदार भी रक छोड़ा है। उन्हें यह भी नहीं मालूम था कि मणिकान्त की कमाई इम बबर है कि सोभाकान्त अब बिना साइसेम्स लिए स्पये सुद

पर लगाने का चुप्पा कारोबार करते हैं।

यहां लगभग सौ सरकारी कर्मचारियों के लिए क्वार्टर थे और दो-तीन को छोड़कर सबो ने अपने-अपने क्वार्टर का आधा हिस्सा किराये पर उठा रखा था। इतना ही नहीं, इनमे से कई वीमा कम्पनी के एजेण्ट थे, पर सारा धन्या अपनी वीवी के नाम से करते थे। नियमत सबो के लिए ऐसा करना वर्जित था, पर सन्चाई यह थी कि ऐसा करने मे शायद ही कोई सकोच करता था। और, सरकार ऐसी कि उसकी नज़र मे सिर्फ सरकारी कर्मचारी ही देश के जिम्मेवार नागरिक हैं, कानूनन नागरिक हैं, और सब घुसपैठिए हैं।

आज गवर्नर साहव के यहां से दो सौ रुपये का बैंक ड्राफ्ट दिवाकर मलिक के नाम रजिस्टर्ड लिफाफे मे आया था। उन्होने लिफाफे को खोला, तो ड्राफ्ट नज़र आया। साथ मे एक छोटा-सा पत्र था, जो अंग्रेज़ी मे था। दिवाकर मलिक समझ न सके। जहां भी सगीत-सभाओ मे जाते, विदाई के रूप मे नकद पैसे मिलते थे। सो लिफाफा लिए-दिए चारुचन्द्र के पास प्रेस में पहुंचे। सौभाग्य से प्रेस का मालिक आज ही दो दिनों के लिए शहर से बाहर चला गया था। यह शहर तो राजधानी का शहर था। किसी दूसरे डिस्ट्रिक्ट टाउन में छपाई-दर के टेण्डर खुलने वाले थे। उस आफिस के बड़े बाबू ने एक रोज़ पहले ही बुलाया था और कहा था, “जो भी बने, लेते आएगा। साहव को यह अधिकार है कि बिना कोई कारण बतलाए निम्नतम दर वाले टेण्डर को भी स्वीकार न करें। अजी, आपसे क्या कहना है। मुह खाता है, तो आखें शरमाती हैं” ‘तो बस समझ जाइए।’

हज़ार रुपये अपने ब्रीफकेस मे लेकर प्रेस मालिक चला गया था और जाते समय मालिक-मैनेजर की सारी जिम्मेदारी चारुचन्द्र पर लाद गया था। प्रेस के दैनिक खर्च के लिए पाच रुपये का एक नोट उनके पास छोड़ते हुए कहा था, “चौहट्टे पर जो चौधरी जी की दवा की दुकान है, वहां चले जाइएगा। कैशमीरो की छपाई के पैसे बाकी हैं, ले लीजिएगा। उससे काम चलाइएगा। यो तो मैं दो रोज़ के लिए जा रहा हू, मगर कुछ देर भी लग सकती है। बसन्तलाल का आदमी आएगा। दस रसीद-डुक

ठीकार है। साठ रुपये उससे बहुत भीजिएगा। और ही वैसे तो कम ही बाईस ठारौक है। मेजिन मैं काम पर एडवांस बाटूंगा। एक-एक वैसे सहैज कर रलिएगा।" और उधर महीन कम में काम कर एडु नर्मचारियों से कहता गया "मैं तौकर आठि ही एडवांस बना। वैसे इस-बीस की बकरत हो तो बाद बाबू हैं ही। मैंने उनको सब कुछ बतसा दिया है। उनसे तुम सोच कहना। प्रबन्ध कर देने।"

बादबन्ध ने आज बड़ी निर्भीकता और जिम्दादारी से दिवाकर मलिक को अपने पास बिठाया। कुछसलोम पूछने लगे ता दिवाकर मलिक ने बहु निष्काफ़ उनके आगे रल्ल दिया जिस पर छया था

'जौन इच्छिया परममेष्ट सविस।

बादबन्ध ने देखते ही पूछा, "यह क्या है मलिक भी?"

"सोसकर देखिए न। मेरी समझ में कुछ नहीं आया तभी तो सोचा कि आपके पास जानूँ।"

बादबन्ध ने निष्काफ़े से कावज निष्कासा और दो-तीन बार उसट-पसट कर देखते हुए कहा, "भीजिए साहब मुंडू भीठा कराए। साठ साहब आप पर खुश हो गए हैं। वो लो रुपये आपके लिए भेजे हैं। इस 'डी० सी० घाष्ट' कहा जाता है।"

'डी० सी० घाष्ट क्या होता है?"

बादबन्ध ने समझात हुए कहा "हिन्दी में इसे 'स्वविवेक अनुदान' कहते हैं। नवभर को यह अधिकार है कि जिसे कुछ सहायता देना उचित समझें, इस घाष्ट से करें। इसके लिए इन्हें सात में पचास हजार रुपय मिलते हैं।"

'सात भग में पचास हजार?"

'हां।" बादबन्ध ने कहा "आपका मुस्य देखकर खुश हो गए हमारे। बड़े कसाप्रमी हैं।"

दिवाकर मलिक लख भर के लिए सोचने लगे—साठ साहब को जब इतना पावर है, तो दो सौ रुपये की जबह पांच सौ भी दे सकते थे। क्या करते! और अभाव में बड़ी उचित यह होती है कि बहु सोममुक्त को भी सोममुक्त बना देता है। दिवाकर मलिक की लो मियति ही ऐसी थी

जिनके पास अपार धनराशि होती है, वे भी लोभ की चंचल चितवन की चोट नहीं सह पाते हैं।

चारुचन्द्र ने समझाते हुए कहा, “यह बैंक ड्राफ्ट मेक्रेटरियेट ब्राच का है। मेरे एक मित्र वही विधान सभा पुस्तकालय में सहायक लाइब्रेरियन हैं। मैं चिट्ठी दिए देता हूँ। उनसे मिल लीजिएगा। वे ड्राफ्ट भुनवा देंगे।”

“अच्छा।”

“और क्या हालचाल है?”

“वस सब बसीवाले की कृपा है।” दिवाकर मलिक ने कहा। वह श्रीकृष्ण को ‘बसीवाला’ ही कहा करते थे।

चारुचन्द्र ने पूछा, “मणिकान्त को तो आप देख ही आए और उनके पिता से भी मिल लिए। अब बतलाइए कि बात कहा तक आगे बढ़ी?”

दिवाकर मलिक बोले, “हा, वह दस हजार नकद मागतें हैं और कन्या तथा दामाद को अलग से मैं जो कुछ दे सकूँ, दे दूँ। कन्या और दामाद को देने की बात तो अलग है। दस हजार रुपये तो मेरे लिए दस लाख के बराबर हैं। शोभा बाबू ने सोचकर बतलाने के लिए बीस-पच्चीस रोज़ का समय दिया है। मेरी ममझ में एक बात आ रही है। आप बतलाइए कि कैसा रहेगा?”

“कौन-सी बात?”

भीतर मशीन चल रही थी। उसकी धरधराहट गूँज रही थी। विजली आफिस का काम हो रहा था।

दिवाकर मलिक ने यों ही अगल-बगल खुफिया निगाह डाली। वह अपनी बात सिर्फ़ चारुचन्द्र को ही सुनाना चाहते थे। आसपास कोई और नहीं था। आश्वस्त होकर कहने लगे, “बन्धुवर, मैंने सोचा है कि मकान बेच दूँ या गिरवी रख दूँ। कन्या का विवाह हो जाए तो गंगा नहाऊँ। एक साहब पुराने परिचित हैं। मैंने इशारे से उनको कहा भी है।”

चारुचन्द्र बड़े सहज भाव से बोले, “और इशारे से वह तैयार भी हो गए होंगे।”

“आपका मतलब?”

“मतलब यह कि ऐसे लोग गरजमन्दों की तलाश में रहते हैं।”

“दूर परजमान तो हूँ ही। एक बैंक वाले साहब भी जान-बूझान के हो गए हैं। भये भाए हैं। मुहम्मद में ही किराये का मकान मिला है। उन्होंने कहा कि बैंक मकान मिराबी ले सकता है परन्तु माय ही जो ऐसे आदमियों की जमानत चाहिए, जिनकी हैसियत इतकी ख़त्म से प्यारा की हा।”

“हां ऐसा ही जाता है।”

“उन्होंने कहा कि अगर एक ही आशमी काफी ठपड़ा हो तो भी काम चल सकता है।”

दिवाकर जी हम सोच पैसों के बाजार में साध-भाजी के बराबर हैं। सवाल यह है कि ऐसा आवसी कौन होया या फिर जागे बड़ा जाए। बुबानी तो सोच यहां तक पहुंचे हैं कि साहब आपका जहां पनीना बहेपा वहां मैं अपना खून बहा दूया मगर मौका जाने पर के खून क्या जासू बहाने तक को शाय नहीं बडते। आरुषत्र जी अपने अनुभव के आधार पर एक ही सांस में कह गए।

दिवाकर मसिक जैसे ठपाक से बोले “बीर किसी पर तो बिरबान नहीं जाता मेरा लेकिन एक आशमी है जो मेरे लिए इन्कार नहीं कर सकता। हैसियत भी कुछ कम नहीं है।”

“कौन हैं वह खजान ?

“प्रकाश बाबू।”

“कौन प्रकाश बाबू एजुकेशन मिनिस्टर को हैं ?”

“बस-बस। आप तो एकदम सालबुझकड निकले।”

“से से जमानत तो बड़ी अच्छी बात है।

“यही जन पर शक नहीं होता मुझे।

आरुषत्र बोले “अरे साहब उनके ही यहां न आपका आवेशन-पत्र पड़ा हुआ है।”

हां वह तो पड़ा हुआ है। मगर, वह सरकारी काम है। उनमें क्या नियम-कायदे चलते हैं। जो काम सीधे उनके हाथ का है उनमें वह कोई हीसा-हवासा नहीं करते। हमारे रिश्ते बड़े गहरे हैं। उनकी जो सद्गति को मैंने अपनी सच्ची मानकर भावना-बिरफला मिलपाया।

दे सकते थे, मगर लडकियों में कोई खास गुण है, यह कहने की हिम्मत नहीं थी। मैंने साल-भर मेहनत की। दोनों लडकियाँ अच्छा नाचने लगीं। वर की कृपा से दोनों की अच्छी शादियाँ हुईं।”

“उन्होंने आपको कुछ दिया भी तो होगा ?”

दिवाकर मलिक बोले, “भगवान गवाह है, चारु बाबू। न मैंने कुछ मागा और न उन्होंने कुछ दिया। तब भी एक बात है। उनसे मिलने-जुलने तो बड़े लोग ही आया करते हैं। पैसे वाले और खानदानी आदमी ठहरे। सबों से मेरा परिचय कराते और कहते थे कि मलिक जी मेरे दोस्त हैं, इनकी दोस्ती पर मुझे नाज़ है।”

“अब नहीं कहते होंगे।” चारुचन्द्र ने बेलौस हो कर कहा।

दिवाकर मलिक इस वार शका में पड़ गए। कुछ सोचते हुए बोले, “जब से मन्त्री हुए हैं, तब से मौका ही नहीं मिला कि उनसे मिलकर दिल की बातें कहूँ। खैर, हैं तो बही प्रकाश बाबू। इतना तो नहीं बदल गए होंगे। और आदमी चाहे जितना बड़ा हो जाए, अपने हित-मित्रों को नहीं भूलता।”

चारुचन्द्र इस पर कुछ कहना चाहते थे, मगर कुछ कह न सके। इसी बीच उन्होंने मशीन पर कागज़ सभाल रहे आदमी को बुलाकर कहा, “दो गिलास चाय ले आओ। कहना, ज़रा ताज़ा लिकर बनाएगा।”

दिवाकर मलिक ने कृतज्ञता से भर कर कहा, “चारु बाबू, आप मेरी बड़ी खातिर करते हैं। चाय मेरे लिए न मगवाइए, मैं चाय नहीं पीता। पान खिलाकर आशीर्वाद दीजिए कि यह यज्ञ पार लग जाए।”

चारुचन्द्र ने कहा, “दहेज-निरोध कानून एकदम बेकार साबित हो रहा है। लेनेवाले ले ही रहे हैं और देनेवाले दे ही रहे हैं। खैर, करना क्या है ? मिनिस्टर साहब आपका काम कर दें तो।”

“हुआ ही समझिए, कहने-भर की देर है।” दिवाकर मलिक ने प्रकाश बाबू के साथ अपने पूर्वसम्बन्धों को याद करते हुए कहा।

चारुचन्द्र बोले, “ईश्वर उनका भला करे।”

स्टेज का सारा सेट बदल चुका है।

बगकों की पसकें पसीने से भीसी हो रही हैं। पर हवा लाने देने के लिए वे अपनी आंखों पर बड़ी काली पट्टी उतारने को तैयार नहीं हैं। वे बगसनीर का रुमास खींचते हैं और पट्टी के भीतर धीरे-धीरे रुमास का छोर से आ कर पसकों का पसीना पोंछ से रहे हैं। न जाने आनेवाले दुग्ध को देखने से वे सास तीर से डर क्यों रहे हैं।

सत्य का बिपन्न सम्भवतः उन ओसकर स्थिति को मयांक बना देना। वह दर्मकों के बीच बड़ी तेजी से उतर पड़ेगा। पता नहीं तब विदुष्य रुमा के इन प्यासों का क्या हाल हो।

सेट बदल चुका है। परदे पर एक आसीघाम बोठी का चित्र है। उस पर कोई भ्रमण महारा रहा है। भीचे बाहर के कक्ष में दो पड़े-लिखे युवक और एक अनपढ़। बाईं ओर के बरामदे में राहफल लिए सप्तरौ खड़ा है। पश्चिम की ओर का भाग सूना दिखलाई पड़ता है।

जहां दो पड़े-लिखे युवक हैं वहां एक बड़ी-सी मेज है। मेज पर एक कुसवस्ता है—प्लास्टिक के रंग-बिरंगे फूलों से सजा हुआ। इसी समय उल्टे-उल्टे भागे बढ़ते हुए विवाकर मलिक वहां आ जाते हैं। परन्तु, वहां तक आते ही उनका सारा भय जाने कहां जाता है। वे दोनों नबयुवक उन पर वृष्टि डालते हैं और तनिक सतर्क हो जाते हैं। उस ओर खड़ा अपराधी जाने कहां से एक समोसा निवास कर जाने समता है। मेज पर जैसे आसमान से दो-तीन समाचारपत्र आ बिरत हैं। दोनों में से एक नबयुवक उन्हें किसी आङ्गुपर की तरह बाम सेना चाहता है। मगर, वे पत्रों पर बिस्तर जाते हैं। अपराधी मपकता है और उम्मे एक हाथ से उठा उठकर मेज पर रखता है। पूरापयुवक पौरम उठता है और बगस के स एक विशाल रजिस्टर उठा लाता है। उस पहले देखता है पिट्टु बड़े-बड़े पन्ने पछटते समता है। हर पन्ने पर समाचारपत्रों की

होशियारी से चिपकायी हुई हैं। कहीं-कहीं मन्त्री महोदय के चित्र भी नजर आ जाते हैं, जो पहले ममाचारपत्रों में प्रकाशित हो चुके हैं। दूसरा युवक पाम खड़े चपरासी से कहता है, "उस कमरे की पूर्व वाली आलमारी में गोद की शीशी और ब्लेड है। उठा लाओ।"

पहला युवक दिवाकर मलिक की ओर उपेक्षा से देखता है और पूछता है, "आप कहाँ से आए हैं?"

"यही मैं।"

"यही मैं?"

"हां।"

"किम सिलसिले में आए हैं?"

उधर दूसरा युवक इतमीनान से कुर्सी पर बैठ जाता है और हाथ में ब्लेड थामे समाचारपत्रों को पढ़ने लगता है। वह तेज़ी से पृष्ठों को पलटता चला जाता है। दो-एक जगह लाल पेन्सिल से टिक् मार्क लगा देता है। पहला युवक दिवाकर मलिक की ओर से मुहफ़ेर लेता है, और अपने सहकर्मी युवक से पूछता है, "क्यों जी, है कुछ?"

उत्तर मिलता है, "है तो जरूर। मगर यह 'उदयास्त' वाला साफ़ दगा दे गया।"

"दगा दे गया, क्या हुआ?"

"बच्चों में मिठाइयाँ बाँटते हुए मन्त्री जी का चित्र नहीं प्रकाशित किया। मैंने कह भी दिया था। मन्त्री जी ने तब मीटिंग में यह भावना व्यक्त की थी कि वह चाहते हैं कि सिर्फ़ हमारे राज्य के बच्चे क्या, पूरे मुल्क के बच्चे रोज़ मिठाइयों से ही नाशता करें और पढ़-लिख कर देश का नाम ऊँचा करें। यह काम कैसे हो, इसके लिए एक समिति का गठन शीघ्र ही किया जाने वाला है।"

तभी चपरासी अचानक भागता हुआ बाहर निकलने लगता है। दूसरा युवक पूछता है, "क्यों जी, क्या हुआ?"

चपरासी बड़ी जल्दी में कहता है, "वे दोनों लौंढे फिर कीयले और रद्दी कागज़ बटोरने बोरिया लिए आ गए। कल ही मैंने इनकी मरम्मत की थी। सा...आ...आ...ले।"

पहल मुबक का नाम रजन है और दूसरे का सुमन ।

रजन सीम-बत्तीम सास से कम का नहागा और सुमन शायद पच्चीस छत्तीस मात्र का हो । अब रजन फिर दिबाकर मलिक की ओर मुत्ताबिह हाकर पूछता है 'यहां कैसे-कैसे आए ?

बापों कक्ष पर पड़े रेरागी सुपट्टे को संभासत हुए निबाकर मलिक कहत है 'प्रकाश बाबू सं मिसने आया हूं ।

रजन निबाकर मलिक का गीबे सं ऊपर देखने सपता है सोना उनसे कई भाटी मूस हा यई हो । रजन की आंखें उनस शायद पुछ रही है— भल आदमी तुम्हें 'माननीय मन्त्री महोदय कहना चाहिए था । फिर बह प्रत्यसत शरारतन पुछता है 'प्रकाश बाबू प्रकाश बाबू कौन ?

'अपन सूबे क पिता मन्त्री ।

'ता मही न कहना चाहिए । प्रकाश बाबू तो इम शहर में न रजन कई दर्जन होमे । इमन मन्त्री तो एक ही ।

'जी हां जी हां ।

सुमन एकाएक पूछ बैठता है 'आपको बुसाया पया था ?

दिबाकर मलिक कहत है 'जी ना । बुसाया मही पया था ।

रजन तनिक राब में पुछता है 'तो आप कैसे बसे आए क्या नाम है आपका ? क्या करते हैं ?

दिबाकर मलिक को समा बैस कही आकर फस गए । फिर भी उन्हांन साहस बटोर कर कहा है 'मन्त्री जी मेरे पुराने मित्र हैं । मरा नाम दिबाकर मलिक है । मैं कबक बासर हू ।'

सुमन कुछ धीरठा से पर उपेसा से ही कहने मगा है 'भाह हा मित्र हैं । ठीक कहा आपने—पुराने मित्र ।

'मैं समझ नहीं ।

'इसमें कुछ क्याबा नहीं समझना है महाराज आपके यहां हम खुब कार भेजते ।'

'आप बासर हैं ?' रजन पूछता है 'जीन दिबाकर मलिक कहत रहे हों । फिर कहता है 'होने माई । उम्न मम राजधानी है । यहां सैकड़ों सौप बाई-

काजल डाले, वाल बढ़ाए नज़र आते हैं ।”

दिवाकर मलिक के कानों में रजन के ये शब्द उतर नहीं पा रहे हैं । वह जैसे घूरते हुए उसे देखते हैं और कहते हैं, “खैर, इससे आपका तो कोई नुकसान नहीं होता... प्रकाश वावू हैं तो ?”

“हां, हैं, मगर मिल नहीं पाएंगे ।” सुमन बड़ी लापरवाही से कहता है और समाचारपत्र में प्रकाशित एक खास खबर वाले अंश को ब्लेड से काटने लगता है ।

“क्यों, क्या बात है ? उन्हें मेरा नाम बतला दिया जाए ।”

“नाम बतलाने कौन जाए ? वह फाइलें देख रहे हैं । नाराज़ होंगे ।”

“कुछ भी देख रहे हो । मेरा नाम सुनते ही मुझे बुला लेंगे । नाराज़ नहीं होंगे ।” दिवाकर मलिक को इस बार कुछ जोर देकर कहना पड़ता है ।

रजन तनिक रोव में आ जाता है और कहता है, “क्यों, आप ऐसा कैसे कह रहे हैं ? क्या आप विधायक से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं ? अभी उन्होंने दो विधायकों से मिलना स्वीकार नहीं किया ।”

“विधायक, विधायक कौन होते हैं, भैया ?” दिवाकर मलिक पूछते हैं ।

“एम० एल० ए० । ये लोग कानून बनाते हैं, राज्य का इतिहास-वदल देते हैं ।” सुमन जवाब देता है ।

“अच्छा ।” दिवाकर मलिक का स्वाभिमान शायद जाग पड़ता है । बोल पड़ते हैं, “मैंने महिला कालेज में डास-टीचर के लिए आवेदन-पत्र दिया था । उस पद के लिए मैट्रिक पास होना ज़रूरी था ।”

रजन हलका ठहाका लगता है, “ओह हो, तो डासर महोदय, आप मैट्रिक पास भी नहीं हैं ? वाह, एक तो मिया तुतले, दूसरे मुह में रोटी !”

“हां, मैं मैट्रिक पास नहीं हूँ, मगर सुनिए जनाब, ये जो एम० एल० ए० होते हैं और राज्य का इतिहास-भूगोल बदलने का काम करते हैं, कौन-कौन-सी योग्यताएं रखते हैं ? कह दिया जाए कि नटवरी का एक मुखड़ा लगाओ, तो पमीना छूटने लगे ।”

“यह जनतन्त्र है । इसमें जो अपने लिए जितना वोट वटोर सके, वह उतना ही योग्य होता है । मगर श्रीमान जी, आप वहस न कीजिए । आपसे

कहा जा चुका है मंत्री महाशय फ्रांसों देसने म व्यस्त हैं। जाइए। हाँ
 मितना ही हो तो किमी एम० एस० ए० का पकड़िए और हाँ यह
 नटबरो का मुपड़ा आप भगतो रहिए, बस्कि भाव-भीसाव भगतो रहिए,
 नेताओं को इन पिन्डुल की बाता से कोई मतलब नहीं। सुमन कहता है।
 अन्ध उसने मेढ पर ही अपनी दायी ओर रख दिया है।

दिबाकर मसिक शायद बबड़ाहट में बोल पड़ता है 'यदि यही हाम
 रहा तो हम हड़ताल करेंगे।'

"जाइए, जाइए, बच्चों बेटी बातें न कीजिएना। आप जैसे लोग
 पत्राब मे कन्याकुमारी तक सब अयह हड़ताल कर दें तो भी कोई पूछने
 नहीं जाएगा कि आपकी माँयें क्या हैं। कहकर रंजन बेत भय लिताता
 है "सुनिए, अब आप जाते हैं या हमें कुछ और करना पड़ेगा" ?

दिबाकर मसिक का स्वर बरबराते लगता है। कहते हैं "नहीं-
 नहीं। मैं जाता हू। कुछ और करने की आवश्यकता नहीं।

रंजन और सुमन उनकी ओर हिकारत-भरी नजरों से देखने लगते हैं
 और वह भयातुर बेहरा बच्चों की ओर घुमाकर मूर्तिपत् खड़े हो
 पते हैं।

f-3600
 3420

राज्य में दलबदल पार्टी की सरकार शासन कर रही थी और सहाय जी इसी शासक पार्टी के विधायक थे। सहाय जी शहर के पश्चिमी इलाके का प्रतिनिधित्व करते थे और जब भी बाढ़ अथवा सूखा पड़ता, कम्बल और अनाज बटवाने का भार अपने दुर्बल कंधों पर ले लेते थे। दिवाकर मलिक का घर इनके ही चुनाव क्षेत्र में पड़ता था। सयोग अथवा प्रेरणा से दिवाकर मलिक इनके पास पहुँच गए। इन्होंने एसेम्बली भवन में ही माननीय शिक्षा मंत्री से इनकी भेंट करा दी। प्रकाश बाबू मिल कर मुस्करा दिए, तो दिवाकर मलिक को लगा, जैसे सोकर सवेरे उठे हैं, तो देखते क्या हैं कि तकिये के नीचे कोई पाच-सात हजार के नोट पड़े हुए हैं। खुशी से गद्गद हो उठे। उनकी ओर सकेत करते हुए प्रकाश बाबू ने सहाय जी से कहा, "मैं इनको जानता हूँ। कथक नृत्य के क्षेत्र में इनकी उपलब्धियाँ सराहने योग्य हैं।" फिर दिवाकर मलिक से पूछा, "कहिए, आप क्या चाहते हैं?"

लच आवर हो चुका था। एसेम्बली भवन के अन्दर और बाहर सामान्य से अधिक चहल-पहल दीख रही थी। कोई घिघियाते पहुँचा था, कोई रोने, कोई हसने-मुस्कराने और कोई विचौलिया बनकर शासक और शासित—दोनों पक्षों का कल्याण कराने आया था। इनमें पिछली सरकार के कई भूतपूर्व मंत्री, राज्य मंत्री और उपमंत्री थे, जो अब यहाँ विधायक के रूप में उपस्थित थे और इनमें से सवों के कंधे से एक-एक झोला लटक रहा था, जिनमें उन लोगों के नाम, पते और कीचड़ में फसी उनकी उन गाड़ियों का विवरण था, जिनके लिए वर्तमान मन्त्रियों से पैरवी करनी थी। शासक दल में नहीं रहकर भी वह जनकल्याण की भावना से बुरी तरह पीड़ित थे।

"कहिए, आप क्या चाहते हैं?" प्रकाश बाबू के इस प्रश्न में कुछ रूखापन नज़र आया। मगर, दिवाकर मलिक ने सोचा कार्यव्यस्त रहने के

कारण ही यह स्थापन है करना प्रकाश बाबू की बाणी में शहर से कम मित्रस तो किसी हालत में हो ही नहीं सकती थी। अतः उत्तरस्वरूप बोस "आपसे कुछ निजी बातें करनी थीं। वह यहाँ सम्भव नहीं जाम पड़ता।

'ठीक है, आप रात आठ बजे आ जाइए।

'यहाँ जोय आपसे मिलने नहीं बैठे। बड़ी अभद्रता से बातें करते हैं।'

दियाकर मलिक ने कहा।

'कोई अभद्रता से बातें नहीं करेगा। मैं कहूँगा।

"तो आज रात आठ बजे बरकर आऊँगा। नमस्ते। दियाकर मलिक ने कहा। सिला मन्त्री पुच की जोड़ मुड़ गए। कुछ और विधायक प्राइवेट बातें करने को ब्याकुल मजूर आ रहे थे।

आज रात किसी ने दिवाकर मलिक को नहीं रोका था। वह भीषे प्रकाश वावू से मिले। सारी बातें कमरे में हो रही थीं और वहा कोई अन्य व्यक्ति नहीं था। दिवाकर मलिक ने अपनी समस्याओं से प्रकाश वावू को अवगत करा दिया। प्रकाश वावू कुछ सोचते रहे।

दिवाकर मलिक कभी उनके चेहरे के भावों को पढ़ते, कभी मेज़ के एक कोने में रखे कीमती टेबललैम्प को देखते। इतने में प्रकाश वावू ने घण्टी दी, तो एक नौकर आकर हाज़िर हो गया। वह काफी नाटा था। एक प्रकार से उसे वौना ही कहा जा सकता था। प्रकाश वावू ने उससे कहा, “नाश्ता और कॉफी।”

वौने ने दाहिने हाथ की पहले दो उंगलिया उठायी और प्रश्नसूचक दृष्टि से मन्त्री महोदय को देखा। मन्त्री महोदय ने कहा, “नहीं, एक।”

“नाश्ता मेरे लिए।” दिवाकर मलिक जैसे निहाल हो उठे। जिससे मिलना मुश्किल था, उसी के साथ नाश्ता। पूछा, “और तो सब ठीक है न?”

“सब ठीक है, दिवाकर जी।”

नौकर चीनी मिट्टी की प्लेट में चार मिठाइया, एक सन्तरा और थोड़ा-थोड़ा सेब-दालमोठ रख कर चला गया। प्रकाश वावू ने बड़ी मुहब्बत से कहा, “नाश्ता कीजिए। वह पानी और कॉफी ला रहा होगा।”

“और आप?”

“मैं? मेरा न पूछिए। काम करते-करते सेहत मिट्टी में मिल गई। मन्त्री बन कर मैं अच्छा-खासा वेवकूफ बन गया। बकालत के साथ-साथ सेहत भी चली गई। अन्न तो कतई हज़म नहीं होता। सिर्फ दूध और फल लेकर दिन काटता हूँ। अगली बार से तो मैं मन्त्रिपद को द्वार से ही नमस्कार करूँगा।”

दिवाकर मलिक के सामने ऐसा नाश्ता हाल में कब आया था, वह

मस्तिष्क पर जोर दकर भी नहीं स्मरण कर पा रहे थे। उनकी जीभ चटपटाने लगी। यह दण धर को भूस गए कि धर पर लार्म क लिए क्या बन रहा होया। लार्म को वमयग्ती ने कहा था, 'आटा है सम्बी नहीं है। मगर चिन्ता न करो। आघ पाव मूंग की दास पकी है। उसी को पीसकर रसा सगा धुंभी।

एक रमगुस्स को उन्होने एक ही भ्रष्ट में मुंह के भीतर दास लिया और फिर सेब-दासमोठ जबान चटकार-चटकार कर खाने लगे। इस स्वार्थपरायणता के लिए यह आघमी घोपी नहीं था बल्कि व्यवस्था दोपी थी इस रहस्य को महरे पानी पीठ कर ही समझा जा सकता है। इसी जीभ रंजन कुछ पूछने के लिए कमरे के द्वार पर आ खड़ा हुआ। प्रकाश बाबू ने किञ्चित् गम्भीरता से कहा 'आइए, ये तो मेरे मित्र हैं।

रंजन चौंखट भांय कर पास आ गया। बिबाकर मसिक ने उसकी ओर बढ़े गर्ब से बेला गोया उसे यह खतलाना चाहते हों कि देख लो अपनेराम कोई मामूली हस्ती नहीं है। उस दिन मेरे साथ बड़-बड़ कर बातें करने तुमने कुछ अच्छा नहीं किया। तुम तो मन्त्री जी के पास आकर सहमे-सहम लड़े हो और मैं कुर्सी पर बैठा हुआ मिठाइयों पर हाथ माफ कर रहा हूँ।

रंजन ने न जाने बड़ी धीमी आवाज में और ह्वाते ने क्या-क्या कहा प्रकाश बाबू बोले 'ठीक है। मैं कल तक जाँडर करने काइस सौटा दूगा। कह दीजिए, चिन्ता न करें।

रंजन चला गया तो गला साफ करत हुए प्रकाश बाबू ने कहा 'बिबाकर बाबू आप सिर से पैर तक कसाकार ठहरे। इन दुनिया में कितना छल प्रपंच है आप क्या जानें? बैंक के हाथ मकान बिरबी रख कर मकान में हाथ घोने के सिवा कुछ और नहीं मिलेगा। धरा पूछिए किनी न कि बैंक में रुपय जमा करने पर किस दर से सूच मिलता है और बैंक में बड़ धीजिए, तो बैंक किस दर से सूच असूसता है। समाधारपथा में बरु बान बिजापन छयबाते हैं और साधो को उमक परिये बनलाग है कि इम रन रकम पर बहुत अच्छा गूब देत हैं। मगर कर्ड देन पर य बैंक बान म्द्वन पठनों में भी क्याशा असूसते है। मैं ऐमे कई साधो का खानगा हूँ जिन्हे

बैंक के हाथ अपने मकान गिरवी रखे, मगर सूद ही जब नहीं भर सके, तो असल यानी मूल क्या लौटाते ? फल यह हुआ कि नालिश करके बैंक ने उनके मकान हथिया लिए और वे बेचारे बेघर हो गए। इससे तो बेहतर होगा कि आप किसी अपने आदमी के हाथ गिरवी रखें। अपना आदमी बुरे-से-बुरा होगा, तब भी मुहब्बत करेगा। मेरे पास रुपये होते, तो यह नौबत ही न आती। आपके काम आ जाता, गगा नहाता। आप जैसे लोगों की सेवा करना और भगवान के साक्षात् दर्शन करना बराबर है।”

मन्त्री जी का यह छोटा-सा भाषण सुनकर दिवाकर मलिक भावुकता से भर आए। बोले, “मेरे परिचितों में कोई आदमी नहीं है, जो मेरा यह काम कर दे। आपको कोई सूझ रहा हो, तो बतलाइए।”

भूतपूर्व वकील और वर्तमान शिक्षा मन्त्री प्रकाश बाबू जैसे उदास हो आए। मेज़ पर बार-बार दाहिने हाथ के अंगूठे की बगल वाली उंगली से न जाने कैसी-कैसी शक्लें बनाते रहे, फिर जैसे बुद्धत्व की प्राप्ति हो गई हो, मन्द स्वर में बोले, “जमाना बड़ा नाजुक है। आजकल किसी को अपना आदमी कहते हुए भी दिल धडकता है। लोग मलाई बनकर पेट में घुसते हैं और तलवार बन कर बाहर निकलते हैं। मेरा हाल तो यह है कि हर महीने की इक्कीस तारीख से कर्ज लेना शुरू हो जाता है... मगर मेरा भतीजा कामदेव, जो इन दिनों जमशेदपुर में ठेकेदारी करता है, उसके पास जरूर कुछ पैसे हैं। उसे कह कर देखता हूँ, राजी हो जाए तो बड़ी अच्छी बात है। आपका दिल क्या कहता है ? उससे चर्चा छेड़ू ?”

“मेरा दिल तो वही कहता है, जो आपका दिल कहता है।”

प्रकाश बाबू ने कहा, “मगर वह है बड़ा काइया ! वह दखली इजारा चाहेगा।”

“दखली इजारा क्या होता है ?” दिवाकर मलिक ने पूछा।

प्रकाश बाबू ने कचहरिया ज़ुवान में समझाया, “दखली इजारे का मतलब यह हुआ कि रुपये लेकर मकान आप रुपये देने वाले को सुपुर्द कर दें। जब रुपये वापस करें, तो अपना मकान वापस ले लें। दखली इजारे में यही हाल खेत के साथ भी होता है। इसमें सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि सूद नहीं देना पड़ता।”

दिवाकर मलिक कुछ परेशान हो आए। बोले, 'प्रकाश बाबू, मेरे पास कोई दूसरा घर नहीं है।'

प्रकाश बाबू ने जैसे वास्तविकता के मुकाबले से परवाह टूटा हुआ कहा, 'दिवाकर बाबू, यह राजधानी का शहर है। यहाँ सेहतर प्रतिशत लाग किराये के मकानों में रहते हैं जिन्हें बकीस, डाक्टर, प्रोफेसर, बिजनेसमैन और बड़े-बड़े अप्पार सामिल हैं। आप परेशान न होइए॥ मैं आपको अनन्त पर्यटकों में से एक पसैंट दिखवा दूँगा। किराया भी क्यावा नहीं है। सिर्फ पचहत्तर रुपये ।'

कामरेब ठीक समय पर जमशेदपुर से आ गया था। रजिस्ट्री आफिस में दसवीं हज़ारे की रजिस्ट्री हो गई। प्रकाश बाबू ने दिवाकर मलिक को दस हज़ार की जगह बारह हज़ार रुपये दिखवाए थे। और उधर अपने मतीब कामरेब से कहा था 'बुपचाप दे दो। मकान समझे मेन रोड पर ही है। रिक्श टमटम मोटरें—सब दरवाज से मुझरती हैं। मकान जिस मौके पर है वहाँ ऐसा मकान करीबना चाही तो एकमुस्त पचास हज़ार रुपये निकालने पड़ेगे। किराये पर भी समा होने तो दो सौ रुपये मासिक मिलेंगे।

अब दिवाकर मलिक को धीम्र ही घर से बेघर होना था।

सुरेश पाठक को अब तक मकान नहीं मिल पा रहा था, हालांकि वह मकान की तलाश में लगे हुए थे। आफिस में दोस्तों में भी कह रखा था। दोस्तों ने यकीन दिलाया था कि वे कोई-न-कोई मकान दिलवा कर रहेंगे। किन्तु इन बड़े शहरों में रहने वाले लोगों का जीवन बहुत भागदौड़ का जीवन होता है। मचाई यह थी कि लोग इस कान से सुनते और उम कान से उड़ा देते और याद दिलाने पर कहते, "मैं भूला नहीं हूँ। अपने मुहल्ले में पड़ोसियों से भी कह दिया है। पता लगते ही मैं आपको अपने साथ ले चलूंगा। देख लीजिएगा, तब 'हा' या 'ना' कहा जाएगा। आपका देखना जरूरी है।" गोया वे मकान दिलवा कर रहेंगे।

डिहर समाचारपत्रों में आए दिन इस आशय के समाचार प्रकाशित हो रहे थे कि मायके से दहेज न लाने के कारण बहुत-सी नवविवाहिताओं को ससुराल वाले या तो जान से मार डाल रहे हैं या रोज-रोज के व्यंग्यों की चोट नहीं सह पाने के कारण वे आत्महत्या करने को बाध्य हो रही हैं। इस मन्बन्ध में जो कानून बना था, वह कागज़ पर था और दहेज लेने-देने की शर्तें लोगों के दिलों में थी। सरकार भी क्या करे! उसके बहुत सारे काम कागज़ के टुकड़ों पर ही पूरे हो जाते हैं। बाज़ार में घोर मद्गाईं रहती है, मगर कागज़ पर खाद्यसामग्रियों का मूल्य काफी गिरता हुआ साफ नज़र आता है। अकालग्रस्त क्षेत्र में कोई गरीब भूख से मरता है, मगर सरकारी कागज़ बीच गंगा में खड़ा होकर चीखता है कि वह आदमी भूख से नहीं, बल्कि उदररोग से मरा है और समाचारपत्रों में प्रकाशित समाचार को एकदम देवुनियाद करार देता है। मन्त्रिमण्डल में, जो शासन का सर्वोच्च अंग है, रोज ही निर्णय लिया जाता है कि जमाखोरी और कालाबाज़ारियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की जाएगी और इसी गति में बाज़ार ने रोज आवश्यक उपयोग की वस्तुएं गायब होती रहती हैं, काले बाज़ार में और भी गहरी काली छाया उतरती जाती है। कागज़ के बड़े-

नहीं होने वाला है। लड़के लड़की के पवित्र बन्धन की बात है, कोई गुड्डे-गुडिया का खेल नहीं है।”

“बला जाए।”

होटल साधारण किम्म का था, मगर नाश्ते वगैरह की सामग्रिया अच्छी मिलती थी। मिठाइया आलमारी में बन्द रहती थी। उन पर मक्खिया कलावाजी नहीं खा सकती थी। शोभाकान्त सीधे हाल में आगे ही बढ़ते चले गए और मीभाग्य से उन्हें मनोनुकूल स्थान भी मिल गया। कोने में एक मेज़ और दो कुर्सिया। आसपास कोई ग्राहक नहीं। दिवाकर मलिक को वहीं बैठने का संकेत करते हुए होटल के पन्द्रहवर्षीय नौकर को बुलाया और बड़े रोव में कहा, “मेज़ साफ करो। क्या समझते हो, हम लोग ऐसी गन्दी जगह में खाना खाते हैं?”

नौकर कपड़े का एक गन्दा टुकड़ा भिगो कर फौरन ले आया और मेज़ को पोछने लगा। पोछ लेने के बाद उसने पूछा, “क्या लावें, हुजूर?”

शोभाकान्त ने पहले दिवाकर मलिक की ओर देखा, फिर वायें हाथ को पेट पर ले जाकर कहा, “मेरी तो कुछ भी खाने की इच्छा नहीं है। दो घण्टे से खट्टी डकारें आ रही हैं। चाय पी लू, वही बहुत है।”

नौकर ने अपनी दृष्टि दिवाकर मलिक की ओर डाली। शोभाकान्त दुबे ने कहा, “हा हा” आपके लिए ले आओ। जो कहें ले आओ, पहले बतलाओ कि कौन-कौन-सी मिठाइया ताज़ा हैं?”

नौकर पर दुबे जी का रोव पहले ही गालिब हो चुका था। बेचारा डरा। मिठाइया सारी बारी थी। तब तक दिवाकर मलिक बोल पड़े, “भुंके डकारे तो नहीं आ रही, मगर कुछ खाने की इच्छा नहीं है।”

शोभाकान्त दुबे ने बड़ी शीघ्रता में उनके मुह की बात छीनते हुए कहा, “ओह, तब कुछ न खाइए। मेरी बात रखने के लिए कुछ खा लीजिएगा और पीछे डाक्टर की जेब भरिएगा। आयुर्वेद शास्त्र में भी कहा गया है कि ।”

यानी इस प्रकार बात सिर्फ चाय पर ही बन गई। दिवाकर मलिक ने कहा, “आपने दस हजार की भाग की थी, मैं तैयार हूँ। अब ऐसा कीजिए कि यह यज्ञ शीघ्र ही पार लग जाए।”

श्रीकृष्णान्त दुबे ने कुछ सोचने का अभिप्राय पूरा कर रहा, "आप धीमे चाहते हैं तो मैं उसके लिए भी तैयार हूँ। मगर एक बात जान लीजिए।

दिबाकर मलिक न पूछा "कौन-सी बात ?"

श्रीकृष्णान्त कुछ गम्भीर हो आए और धूमधुमा कर बोले "मैं नहीं चाहता कि हम दोनों समझी बनने के पहले ही बड़े घर की दुवा लान बसे जाए। हालांकि आपसे मुझे जो कुछ मिलेगा उसमें मुझे घर न भी धा-बार हज़ार मिलाना ही पड़ेगा। मगर, सरकार पीछे पड़ जाएगी जो ठिक-मच्छप में आपने एक स्वयं और पान-मुपारी ने असावा और कुछ दिया। समझ लीजिए कि घोर कलिकाल आ गया है। प्रलय होने में क्या-किस दिन नहीं है। सच्चा तो मर जाता है और भूटे को इतार तक नहीं मरता।"

"आप जैसा करें मैं इतना करके जैसा करना को तैयार हूँ।"

श्रीकृष्णान्त दुबे ने अपना प्रस्ताव रखा "मलिक जी अगर आपको मुझ पर विश्वास हो तो ये इस हज़ार रुपये मुझे चुपके से दे लीजिए। किसी को कानोंकान खबर न होने पाये। मुना है, सरकार न हर मुहल्ल में तीन-तीन कुफियाँ लैनात कर दिए हैं और उन्हें विरफ्तार करन का भी पावर मिला हुआ है। अपना मलिकान्त तो दिन भर, आप चाहते हैं दिन भर कचहरी में ही रहता है। पुलिसवालों से उसका चेहरे मिलना-मुलना होता रहता है। जैसे मुझे क्या मामूम यह बात मलिकान्त ही बतला रहा था।

दिबाकर मलिक ने अपना भार उतारना ही ठीक समझा। कौन रात रात भर जम कर सुबह का मुँह बंदे। उन्होंने उसी रात भी बने क समझप अपने भागी समझी को घर पर बुला लिया और बाहर का दरवाजा बन्द कर उस हज़ार रुपये उसके आगे रख दिए। श्रीकृष्णान्त दुबे हम बात का बचन देत हुए फौरन निकल पड़े कि "अगले पन्द्रह दिनों में मर का और समाप्त अवश्य हो जाएगा। भववान हमारी सहायता करें!"

र कोर्ट हो, हाईकोर्ट अथवा सुप्रीम कोर्ट—इन तीनों अदालतों में एक-रेकार्ड रूम रहता है। इसमें चल रहे मुकदमों की फाइलें रहती हैं और ख के मुताबिक हर इजलास में जिम मुकदमों की सुनवाई होने वाली है, उसकी फाइलें सम्बन्धित इजलास के पेशकार के पास भेज दी हैं और उसी रोज़ ग़ाम को या दूसरे रोज़ वापस मंगा ली जाती हैं। रेकार्ड रूमों में उन मुकदमों की फाइलें भी सुरक्षित रहती हैं, जिनके न हो चुके रहते हैं। इस के प्रभारी को 'रेकार्डकीपर' कहते हैं।

पेशकार के रूप में मणिकान्त की अच्छी आमदनी थी। वह मुकदमों को झुझा रखता और दोनों पक्षों में अच्छी-खासी रकम वसूलता था। लोग लम्बी तारीखें चाहते, उनमें कुछ ज्यादा वसूलने के इरादे से था, "मुकदमों बहुत ज्यादा हैं। हाकिम जल्दी निपटाने के पक्ष में रहते पन्द्रह दिन में ज्यादा आगे की तारीख डालना ठीक नहीं।"

जब मुकदमों दो रुपये के बदले पाच या दस उसे थमा देता, वह था, "खैर, ताली दोनों हाथों में बजती है। आप क्या चाहते हैं?"

"कम-से-कम दो महीने आगे की तारीख डाल दीजिए।"

"जाइए, मौज कीजिए। आज 2 मार्च है, 18 मई को आइए।"

और, जो कोई मुकदमा जल्दी खुलवाने के इरादे से नज़दीक की ख चाहता, तो उससे कहता, "हाकिम बहुत कड़े स्वभाव के हैं। कहते हैं कि मुकदमों को हमें लेकर नहीं चलना है। गाड़ी सवों की आगे की चाहिए। थोड़ी लम्बी तारीखें लगाया कीजिए।"

"मगर पेशकार साहब, मेरे लिए तो आप ही हाकिम हैं।"

"अभी नहीं, साहब, मैं हाकिम होता, तो हाकिम की कुर्सी पर न जाता? क्या कह, इन लोगों के मिज़ाज को देख कर चलना पड़ता है।

मैं चूक हुई कि नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा।"

"ऐसा नहीं हो सकता," मुकदमों का मुशी कहता है, "मणिकान्त

‘होटल में अदालत का पेशकार रगे हाथ गिरफ्तार !’

अधेर नगरी, 13 मार्च । कल एक होटल में स्थानीय जिला अदालत के सबजज दोयम का पेशकार मणिकान्त दुवे निगरानी पुलिस द्वारा घूस लेते हुए रगे हाथ गिरफ्तार कर लिया गया । पुलिस सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि वह कोई अत्यावश्यक सबूत का कागज फाइल से निकाल कर प्रतिवादी के हवाले कर रहा था, ताकि लिखित प्रमाण के अभाव में प्रतिवादी मुकदमा जीत जाए । सबूत का कागज उमकी जेब में था और वह प्रतिवादी पक्ष के साथ इस काम को निपटाने के लिए होटल में आया था । जैसे ही एक हजार रुपये लेकर वह सबूत का कागज अपनी जेब से निकालने लगा कि सादी पोशाक में आसपाम बैठे हुए निगरानी अधिकारियों ने उसे अपने घेरे में ले लिया । मौ-सौ के दस नोटों पर मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर थे ।

दूसरे दिन इमी सिलसिले में यह समाचार भी पढ़ने को मिला कि न्यायिक दण्डाधिकारी ने जमानत की अर्जी नामजूर कर दी । अभियुक्त को केन्द्रीय कारा भेज दिया गया ।

दिवाकर मलिक तो बड़ी मुश्किल से अपने आसू रोक सके, लेकिन उनकी पत्नी दमयन्ती चीखकर रो पड़ी । उन्होंने चाहा कि यह बात वागेश्वरी के कानों तक न पहुँचे, पर लडकपन में पूर्वी ने मौका देखकर वागेश्वरी को सब कुछ बतला दिया । वैसे भी वह मा-बाप की वेदना से अवगत थी । रोटियों के लाले तो पड़ ही रहे थे, यह घर भी हाथ से निकल गया था । उसे मालूम था कि प्रकाश बाबू ने बड़ी दया करके कहा है कि रलिक जी, पहले आप कन्या का विवाह कर लें, तब घर खाली कीजिए ।

वागेश्वरी का भावुक हृदय रो पड़ा । ‘हाय ! भविष्य कितना सूना और अन्धकारमय है । मैं तो ब्याह के बाद पति के घर चली जाऊँगी और पूरी बहन तथा मा-बाप किराये के घर में रहते फिरेंगे । हर माह बाबूजी किराये की रकम कहा से जुटा सकेंगे ? मैंने और मेरी जिन्दगी ने बाबूजी ! कितना महंगा मोल बसूला है !’

कोठरी बन्द कर वागेश्वरी रौने लगी और दिवाकर मलिक कुछ सोच-र चारुचन्द्र के घर चल पड़े । लगता था, उनके अग-अग में कोई सुइया भो रहा है । कदम लडखड़ा रहे थे ।

शोभाकान्त बुद्धे ने खमीन-आसमान ने बुझावे मिसा रिए। मयर उच्च
 म्यायालय तक ने मणिकान्त को छोड़ना मुनामिब नहीं समझ। मुकरमा
 सनसनीरखड धा और समाचारपत्र बासे प्रत्येक कार्यवाही की सूचना
 समाचार प्रकाशित कर रहे थे।

पड़ोस में रोड समाचारपत्र लिया जाता था। बामेश्वरी पूर्वी में वह
 समाचारपत्र दस मिनट के लिए मंगवाती अपने भावी पति के सम्बन्ध में
 प्रकाशित समाचार पढ़ती और जहां भी एकलव्य मिसता बैठकर जी भरकर
 रोती थी। इसी क्रम में उसने मां-बाप को धीमे स्वर में बर्से करते सुना।
 दमयन्ती बोली "इस अपराध में तुना है लम्बी सजा होती है।"

दिबाकर मलिक ने कहा 'तुना तो मीने भी है। एक आदमी कह रहा
 था कम-से-कम तीन साल का जकर।"

"हमारे लिए तो तीन साल तीन हजार साल के बराबर होने।"

दिबाकर मलिक को इधर किसी ने बठसा लिया था कि सजा हो जाने
 के बाद इस जन्म में सरकारी नौकरी नहीं मिल सकती। मणिकान्त कोई
 राजनीतिक कर्मी तो होना नहीं। फौजदारी मुकरमों में सजा पाया हुआ
 आदमी चुनाव तक नहीं लड़ सकता। सो उन्होंने यही बात दमयन्ती से भी
 कही। अब तो दमयन्ती की रही-सही भासा पर भी तुपारापाव हो गया।
 भासों के जाये तारे छिटकने लगे।

बामेश्वरी प्रकटत इस विपत्ति के सम्बन्ध में कुछ धोस नहीं सकती
 थी। वह कुछ कास बाठाबरण में पसी थी। वह उन आधुनिक युवतियों
 में नहीं थी जो बड़ी बेशरमी से अपनी छाती की समस्याओं में हिस्सा
 बटायी करती हैं अपने और भावी पति के लिए खेबर और कपड़े पसन्द
 किया करती हैं। वह उन युवतियों में नहीं थी जो बागना के कीबड़ में कम
 जाने पर अन्तरजातीय विवाह कर लेती हैं और अपने ग्याह को एक आन्त
 विवाह मानती हैं। वह प्रेम-विवाह रखाने वाली उन आधुनिकियों में तो

कभी हो ही नहीं सकती थी, जो फेरे पडने से महीनो पहले चुपके-चुपके अनगिनत मुहागरातें मना चुकी होती हैं। वह सचमुच ईमा की देटी थी— तन और मन में अस्पृशित धूपवत्ती की भाति पवित्र। सिक्के के किसी भी पहलू में कोई दाग नहीं था।

मुवह के माडे मात वज रहे होंगे। दिवाकर मलिक की सारी बातें सुनकर चारुचन्द्र ने कहा, “अब नैनिकता तो यही कहती है कि शोभाकान्त दुवे आपके रुपये लौटा दें।”

“हा, वही तो मैं चाहता था। प्रकाश वावू के भतीजे को रुपये लौटा दिए जाए, वरना घर छोड़कर किराये के मकान में जाना पड़ेगा।” दिवाकर मलिक ने कहा।

दोनो रास्ते में बातें करते हुए चले जा रहे थे।

राजधानी का शहर।

वही शोरगुल, वही भीडभाड। सवारियों की आवाजे। लोग आ-जा रहे थे। छोटी-छोटी दुकानों के फाटक खुल रहे थे, बड़ी दुकानों के शटर उठ रहे थे। चलते-चलते ये दोनो मणिकान्त के क्वार्टर के सामने आ खडे हुए और पुकारा, “शोभा वावू, ओ शोभा वावू ?”

पुकारने का काम चारुचन्द्र ने किया था।

एक दस-चारह साल का लडका भीतर से निकला। उसने बाहर वाले कमरे की ओर इशारा कर कहा, “आप लोग बैठिए। नाना जी पूजा पर बैठे हैं। अभी आ जाएंगे।”

दोनो बाहर वाले कमरे में चारपाई पर जा बैठे। वातावरण में मूनापन था, उदामी थी। लगभग पन्द्रह मिनट बाद शोभाकान्त दुवे खाली वदन धोती लपेटे हाज़िर हुए। ललाट पर त्रिपुण्ड जैसे चमक रहा था। दिवाकर मलिक पर दृष्टि पडते ही रुआसे हो आए और बोले, “क्या बतलाऊ, समधी माहव, हम तो लुट गए। अब तो किसी को कर्ज देना भी गुनाह है। सुना है, ईश्वर ममदर्शी है, मगर मुझे तो लगता है कि उसके मुकाबले का अन्धा कोई दूसरा न होगा।”

“कब्रें देना गुनाह है ?” बाइबल के मुंह से निकला ।

बयल में एक छोटी-सी कुर्सी पड़ी थी उस पर बैठते हुए गोमाकान्त दुबे ने कहा “जी कबिबल, कब्र नहीं तो और क्या ! जिसने मधिकान्त को ज्ञा दिया है उसे गरक में भी जगह नहीं मिलेगी । मधिकान्त ने उसे भसा गदमी समझ कर बिना बिबा-पड़ी के हजार रुपये कब्र दे दिए थे । मुझे भी नहीं बतनाया । अब जो ब्याह लग हो गया तो रुपयों की आवश्यकता पड़ी । आप जानते ही हैं ब्याह-शारी में रुपयों का हाव-भाव हो जाते हैं । ली का मोट लो बस बाल में लीक के बराबर होता है । बहू को देने के लिए मैं एक हार पसन्द कर आया था । इसकी बनक मधिकान्त को भग पर्य ।

बाइबल बोले “सर, आपके दुःख में हम कोई कम दुःखी नहीं हैं । लेकिन दिवाकर बाबू भी मामूली परेछानी न नहीं हैं ।

गोमाकान्त दुबे ने बड़ी बस्ती में कहा “ये परेछानी में न पड़ें । अब मधिकान्त इनका है । मेरे साथ इनके रिश्त का घागा अब टूटने वाला नहीं । यह ब्याह होकर रहेगा ।

पाह बाबू ने भावी स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा “भगवान न ऐसा करे मपर फर्क कर लीजिए कि मधिकान्त को सबा हो जाती है फिर क्या होपा ? आपने तो कभी यही कहा था कि मधिकान्त बैठता तो है फिरानी की कुर्सी पर, नकर उसकी भासिक आमचनी की पूछ को जब साहब भी नहीं लु सकते लिहाजा उस हजार भक में कुछ बपादा नहीं मान रहा हू ।” दिवाकर बाबू ने सोचा और मने भी कहा कि बसो पाई, सबकी सुख स रहेगी ।”

गोमाकान्त दुबे ने भूतकाल की वर्तमानकाल का रूप बेटे हुए कहा, “हां हां दिवाकर बाबू का सोचना और आपका कहना उचित है । एक तो सबा होगी नहीं क्योंकि हम हार्डकोर्ट तक सड़ेंगे और मान लीजिए, जो सबा हा भी पई, तो मधिकान्त प्रतापी पुरुष है । जेस स छूटकर वह ब्यागार करेगा । उसने ऐसे मजम में जग्म लिया है कि लकमी उससे बिपकी रहेगी ।”

“मुकदमा चलने और फैसला होने में जाने कितने बर्य सड़ेंगे । सब तक

लडकी क्वारी बैठी नहीं रहेगी।" चारुचन्द्र बोल पड़े।

इतना सुनते ही शोभाकान्त दुवे ने पैतरा बदला। कुछ ऊँचे स्वर में बोले, "तो माहव, कौन कहता है कि लडकी क्वारी बैठी रहे? आप जहा चाहे, उसे व्याह दें। हमारी-आपकी तो अभी बातचीत चल रही है। शादिया तो विवाह-मण्डप तक से टूट जाती हैं। मेरे जानते मे तीन वारातों कन्या के दरवाजे में लौट चुकी हैं। शादी-व्याह का मामला कोई हसी-खेल थोड़े ही है। दोनो पक्षों की पूरी रजामन्दी के बिना यह हो ही नहीं सकता।"

"जी हा, जी हा।" दिवाकर मलिक इस समय पहली बार बोले।

शोभाकान्त दुवे का स्वर चढता-उतरता रहा, "अब जमाना ऐसा है कि बिना कन्या को देखे वरपक्ष वचन नहीं देता। मगर, हमारी ओर से ऐसी कोई बात नहीं कही गई। मैंने इसे ठीक नहीं समझा। मैं तो सोचता हूँ, जैसी मेरी कन्या, वैसी दूसरो की कन्या। कन्याएँ क्या कोई गाय-भँस हैं, जो देखा-परखा जाए? इसी तरह यदि वे भी कहे कि हम वर को देखे बिना व्याह नहीं करेंगी, तो हमें कैसा लगेगा? हम तो बुरा मान जाएंगे और कहने लगेंगे कि कन्या विलायती लडकियों के रास्ते पर है, भैया। यह तो जिम दिन हमारी देहरी के भीतर पाव डालेगी, उसी दिन हमारे बाप-दादे की बनी-बनाई इज्जत माटी में मिल जाएगी।"

दिवाकर मलिक तो शोभाकान्त दुवे का भाषण सुनते रहे, मगर चारुचन्द्र ऊबने लगे। वह मुख्य विन्दु पर उन्हें लाना चाहते थे। बोले, "दुवे जी, आपके विचार बड़े उत्तम और अनुकरणीय हैं। आप गृहस्थाश्रम में हैं, मगर आप सोलहो आने महात्मा हैं। अब आप ऐसा कीजिए कि दिवाकर बाबू के दस हजार रुपये लौटा दीजिए। इन्होंने बड़ी महंगी शर्त पर ये रुपये उधार लिए हैं। फिलहाल इनके हक में यही अच्छा होगा कि ये कर्ज के रुपये लौटा दें। आप जानते ही हैं कि शरीफ आदमी के लिए कर्ज कितना बड़ा बोझ होता है।"

शोभाकान्त दुवे को लगा, जैसे पूरा हिन्दुस्तान बड़ी तेज़ी से चक्कर लगा गया। मगर वहाँ भी ऐंसे हार मानने वाले नहीं थे। कुछ धीमे स्वर में बोले, "इस समय तो चाहिए कि दिवाकर बाबू मेरे दुख में साथी बनें।

दया ही सब कुछ नहीं है। मैं तो इसे हाथ का मस मसना हूँ। मणिकान्त जस में है। मुकदमा संवीन है। बात-बात पर रुपये खर्च हो रहे हैं। चाद बाजू इन्हें परेधान होने की जरूरत नहीं। अरे कई कई मिया है तो मूढ़ देना पड़ना यही तो? सरकारी दर पर ये मुझसे रुपये लेकर मूढ़ मदा कर लिया करें। मास भर का मूढ़ मैं पहले देने की तैयार हूँ। बहिए, बिबाकर बाजू?"

चारचन्द्र ता बिबाकर मसिक की स्थिति जानत थे। बाब "इन्हें सरकारी दर म मूढ़ नहीं देना है। इन्होंने अपना मकान लक्ष्मी इबारा पर रखा है। दया देने बाब ने कृपा करते कुछ दिनों की मुहमत दे दी। मामला कन्या ने बिबाह का था बस। कन्या का बिबाह तो रक ही गया। अब कुछ दिनों के अन्दर इन्हें मकान धारणी करके किराया म मकान में आ जाना पड़ेगा। यानी या तो ये बस हजार रुपय तौनाएँ या मकान छोड़ें। और जान सीकिए कि यह सब रजिस्ट्रेशन आदित्य में हुआ है। बड़ इन बाबे का हाथ कानूनन मजबूत है। जैसे भी बिबाकर थी कनाकार ठहरे। कचहरी और जाने को नरक का बड़ा और छोटा बप्टर मानते हैं।

"मानना ही होगा।" घोमाकान्त बाबे। उनका परोवर पचाह बाबा घोमाकान्त दुबे उनसे भीतर फिर से प्रवेश कर गया। उन्होंने उमी घोमाकान्त दुबे की बुद्धि का उपयोग करते हुए कहा "मैं कचहरी और जाने में विश्वास नहीं करता। दिन साफ रहना चाहिए। इस समय मेरा फर्ब तो यही था कि अगर मैं सचमुच इनसे रुपये लिए होता तो फौरन सौदा देता।"

चारचन्द्र बिके। पूछ बैठे "तो क्या ये झूठ बोल रहे हैं?"

सरामर!" घोमाकान्त दुबे म कहा "बेचारे जान ही गए हैं कि मणिकान्त फस गया है। फिर सोच रहे हैं क्यों न इस स्थिति का साम उठाया जाए? पुलिस की मजदूरों म इस समय घोमाकान्त अपराधी है। इसी बहाने बेचारे मुझसे बस हजार ऐंठना चाहते हैं। और बाप भी इस मककार, वईमान के चककर ये पड़ कर मेरे पास बस आए। सोचने की बात है बस हजार रुपय कोई यों ही चूपके से पकडा देना? पुलिस और कानून का डर था कि बहेज की रकम कैसे धुसमाम दी जाए? ठीक है। दरर

आप पर तो ये मुझसे ज्यादा विश्वास करते हैं। रुपये देते समय आपको अपने घर में क्यों नहीं बिठाया, आपके सामने रुपये क्यों नहीं दिए? मैं मैं तब से इनकी इफ्जत बचाने के लिए 'हा-हा' किए जा रहा हूँ और तब भी ये सचाई को जाहिर नहीं कर रहे हैं। होंगे ये कलाकार अपने घर में, मगर मैं तो इन्हे मुल्क का सबसे बड़ा ठग ही समझ रहा हूँ "हरे कृष्ण, हरे कृष्ण! अब प्रलय होने में ज्यादा दिन नहीं लगेंगे—हाय, हाय, 'मन मलिन तन सुन्दर ऐसे, विपरस भरा कनकघट जैसे'।"

चारुचन्द्र की बुद्धि को जैसे लकवा मार गया। कुछ ग्लानि भी होने लगी। फिर भी उन्होंने दिवाकर मलिक से पूछा, "दिवाकर जी, क्या शोभाकान्त जी का कहना सही है?"

दिवाकर मलिक को कमजोरी महसूस होने लगी। वह वास्तव में एक शब्द भी नहीं बोल सके। चुपचाप शोभाकान्त दुबे को निहारते रहे। पाच मिनट तक यही हाल रहा। अन्त में चारपाई से उठते हुए दिवाकर मलिक ने इशारे से चारुचन्द्र जी को कहा, "चलिए।"

बाहर निकल कर दिवाकर मलिक का पसीना छूटने लगा। उन्हें गंश आ गया। चारुचन्द्र ने फौरन रिक्शा किया और उन्हें उनके घर ले आए। दमयन्ती को फुसफुसा कर कुछ समझाया। स्वयं दौड़ते हुए पडोस के एक डाक्टर के पास गए।

पूर्वी और वागेश्वरी दोनों भीतर से भागती हुई पिता के पास आईं। वागेश्वरी पर नज़र पड़ते ही दिवाकर मलिक को जैसे होश आ गया। वह फूट-फूट कर रोने लगे।

घोभाकाम्र हुने मे एक निश्चय कलाकार ने रिश में कमी भयानक आम सुमगा दी थी, कहना नहीं पड़ेगा। दिवाकर मसिक की मानसिक स्थिति कुछ पापल जैसी हो गई थी और इस पापसपन की स्थितिमें वह प्रात भाठ बजे ही प्रकाश वाङ् की बोठी की ओर चम पड़े। उनसे भिसकर वह बन इतना ही निवेदन करना चाहते थे कि अभी उनसे मकान न वाली बरामा पाए।

पिछले दिन दस बजे जब चाकचन्द्र डाक्टर को लेकर आए थे तो बावेश्वरी को ओर देकर दिवाकर मसिक के पान से हटा दिया था। और बावेश्वरी की कि किवाड़ की ओट में छिपर सब कुछ सुन रही थी।

डाक्टर ने जांच करके कहा "इहें किमी बात का गहरा सदमा पहुंचा है। इनके साथ कुछ प्रेमपूर्ण व्यवहार किया जाना चाहिए। आप सोम कुछ बतसाइए तो सही कि सदमा किस बात का पहुंचा है?"

उत्तर में धीरे-धीरे चाकचन्द्र ने डाक्टर को वास्तविकता बतला दी। इधर बावेश्वरी ने सब कुछ जान-मुन लिया। अगर, सबों के सामने वह अपने को अनजान ही बनाए रही।

दिन बीता रात बीती। सुबह हुई।

दस बजे गए। दमयन्ती ने पति की बड़ी प्रतीक्षा की मगर वह नहीं सीने। पूर्वी के स्कूस जाने का समय हो गया था। दमयन्ती का हास कुछ अच्छा नहीं था। किन्तु धर्मपरायण भारी धोर विपत्ति में भी अपने धार्मिक कसम्पों से विमूल नहीं होती। वह गयास्तानार्थ बच्चे भर से तैयार थी। अम्त मं उन्होंने पूर्वी को स्कूस जाने दिया और बावेश्वरी से कहा "बेटी मैं मंगा जी जा रही हूं। बाहर का दरवाजा बन्द कर लो। तुम्हारे पिताजी भा ही रहे होंगे। माबें तो बतमा देना गयास्तान को गई हूं। अल्ट ही सीट माएंगी।"

"अच्छा मां तुम जाओ।"

पूर्ती स्कूल चली गई। दमयन्ती ने गगाघाट का रास्ता पकड़ा। वह चुपचाप चली जा रही थी और सोचती जा रही थी कि अब क्या होगा ?

इधर घर विलकुल सूना था। वागेश्वरी पहले थोड़ी देर टहलती-फिरती रही। फिर बैठकर रोने लगी। इस समय उसे चुप कराने वाला या डाढम वघाने वाला घर में कोई नहीं था। एकाएक वह उठी। दौड़कर बैठक में घुसी। उसने कुण्डी की जाच की कि वह ठीक से लगी तो है। जब उसे मन्तोप हो गया, तो लौटी। फिर न जाने क्या मन में आया। बड़ी तेज़ी से बैठक में गई और मेज़ पर रखे पापाणनिर्मित बालकृष्ण की मोहिनी मूरत को उठा। लाई। इसके बाद कमरे में घुस गई और भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लिया। अब चारपाई पर जा बैठी। बालकृष्ण की मूरत उसके बायें हाथ में थी। धीरे-धीरे उसका गौर मुखमण्डल काला पड़ने लगा। उसके कोमल तलवों में एक प्रकार की सनसनाहट पैदा होने लगी। उसने बड़ी तेज़ी से छत की ओर देखा।

उपस्थित दर्शकों ने भले ही अपनी-अपनी आंखों पर कासी पट्टी पड़ा रगी है पर चूकि वे 'मुठ कमा के प्यामे' हैं अतः प्राचीन नाट्यशास्त्रानुसार मंच पर बीभत्ता रस बासा वृत्त नहीं कार्यान्वित किया जा रहा है। नीरेटन केवल नेपथ्य में सूचना देता है।

उधर से संवास्तान कर दमयन्ती सीटीं और उधर से दिवाकर मसिक। दोनों घर के दरवाजे पर एकमात्र मिले। दरवाजा भीतर से बन्द था। दोनों बारी-बारी से वस्तुके देते रहे चीख-चीखकर पुकारते रहे पर दरवाजा नहीं खुलता था नहीं खुला। दिवाकर मसिक ने गमियारे में प्याकर झंका। जिस कमरे में बापस्वरी मोठी बैठती मटती थी उस कमरे में झंजन की प्रेरणा मिली। लिङ्की बन्द थी। हाँ एक छोटा-ना आड़-ठिरछा मुराण बकस्य था। दामीं आम बन्द कर बायीं आंत को उस मुराण पर मेट करके जा झुठ देना वह चीखने चिस्ताने और प्ताने क लिए कापी था। पर, समय ने उन्हें कठोर और काताक दोना बना लिया। यह गली आम पस्ता नहीं थी। इस ओर अनुपवायी पीछों की झड़िया थी और पीछे की ओर गहड़ा का निममिमा था। इस स्थिति में दिवाकर मसिक न साम उठाया। पारिरीक बस की दृष्टि ने वह क्षण भर में भीम बन गए। दो-तीन झटकों में लिङ्की माथ डाली और उछल कर कमरे के भीतर धूम गए। फिर लिङ्की को यवास्थान मन् किया हुआकि हकी हुबा-भाम से वह गिर सकती थी।

अब वह बाहर की ओर पीड़े और भीतर में दरवाजा खोल दिया। दमयन्ती भीतर प्रवेश कर गई। दिवाकर मसिक ने दरवाजे को बन्द करन हुए कहा 'बोई भी पुकारे कहना बाहर गए हैं। पडाम की काई औरत भी भीतर न आम पावे। जना अब यह भी भुगतना है।

दमयन्ती के पांशों में खम माप पिपट गया। उन्होंने पूछा "यह क्या सोम रहे हो ? क्या हो गया ?

दिवाकर मलिक ने एकदम खामोश रहने का इशारा करते हुए कहा, “वागेश्वरी ने फासी लगा कर आत्महत्या कर ली है। अपने कमरे में अभी उमी हालत में है। चलो, गाँठें खोल कर उसे उतारें। लगता है, शोभाकान्त दुवे ने जो मुझे दगा दिया, वह सब कुछ इसे मालूम हो गया।”

दमयन्ती पत्थर बन गई। यह सब कुछ सिर्फ रमोला के घर वालों को मालूम हुआ। उन लोगों ने पूरी गोपनीयता बरती और उन लोगों के सहयोग से ही, डाक्टर की मदद लेकर, मुहल्ले वालों को बतलाया गया कि वह भयानक पेटदर्द में चल बसी। अर्थी को लेकर बहुत थोड़े लोग निकले। शाम के चार बज चुके थे। स्वयं पिता ने पुत्री को मुखान्ति दी। चिता घघक उठी। गंगा का किनारा। चीलें और काँवे चिता के ठीक ऊपर आसमान में पख फैलाए चक्कर लगा रहे थे।

नेपथ्य से माइक्रोफोन गुंज रहा है।

दिवाकर मसिब ने प्रकाश बाबू का अपनी पुत्री बागेश्वरी की मायु के विषय में बतसाते हुए कहा "भीत को तो बम एव बहाना चाहिए। पेट में दर्द हुआ और देखते-देखते बच्ची घाम्त हो गई।"

सुनकर प्रकाश बाबू बोले "हां धई आपने सुना ही होगा हमारे उपरिगपपास मन्त्री भन्जकुमबासा महिसा सिसाई केन्द्र का उद्घाटन करने जा रहे थे। बड़े प्रसन्न थे। पता चला कार में बसे ही जा रहे थे कि कुछ बैचैनी महसूस करने लगे। पसीना छूटने लगा। बच्चे उद्घाटन भी न कर सके और अस्पताल में भर्ती हुाना पड़ा। आठ घंटे तक डाक्टरों ने पलंग से उतरने नहीं दिया।

"बड़ा खर्च आया होगा इलाज पर ?

"खर्च तो खैर नहीं आया। सरकार की ओर से सारी व्यवस्था थी। बी० आई० पी० ठहरे न।" ठिछा मन्त्री प्रकाश बाबू ने कहा।

इसके बाद न जाने किस वीतान में उद्योपक के हाथ से माइक्रोफोन छीन लिया और बड़ी ऊंची आवाज में बोला "बी हूँ जनाब इस मुस्क में कानिवास के बंटे हैं और आर्यभट्ट तथा पाणिनि की बीसाबें भी मगर यहाँ चार भोग ही मुस्क के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति माने जाते हैं— राष्ट्रपति मन्त्री संसदु सबस्य और विद्याल सभा सदस्य। यहाँ कला विज्ञान और साहित्य के दीपक को आधी-पानी से बचाने का काम करने बास या कम-कारकाओं में पसीना बहाने बासे इन चारों प्रकार के बनि महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की अपोपित प्रजा हैं।"

वर्क जो गुंज कला के प्यासे हैं और जिनकी आंखों पर जल के कासी पट्टियां चढ़ी हुई हैं न जाने इसका क्या अर्थ लगाते हैं कि उन्हे के करतसम्बन्धि करते हैं। पीछे बैठे हुए एव वर्क की पट्टी कुछ होम्मे रज र्ने है। वह पट्टी को कसने मयता है।

माइक पर उद्घोषक कुछ कहने लगता है ।

दिवाकर मलिक प्रकाश वावू से एक तरह से रो-रो कर कहने लगे, “वर वक्ष वाले ने दस हजार रुपये हज़म कर लिए । बहुत दिनों से आपके विभाग में आर्थिक सहायता के लिए मेरा आवेदन-पत्र पड़ा हुआ है । साल-भर से कम नहीं हुआ । कुछ किया आपने ? कुछ रुपये मिल जाते, तो आपके भतीजे को देकर मकान जो गिरवी पड़ा है, उमका ।”

प्रकाश वावू ने टोका, “महाराज, आप यह क्या कह रहे हैं ? अब तो उस आवेदन-पत्र पर विचार किया ही नहीं जा सकता । आपने कन्या के विवाह के लिए आर्थिक सहायता मागी थी और अब कन्या रही नहीं ।”

“हा, यह तो आपने सही कहा ।”

प्रकाश वावू ने मुझाया, “आप सीधे आदमी ठहरे, और मेरा भी यही हाल है । मैं मिनिस्टर क्या हुआ, लोगो ने समझा कि कारू के खजाने की चाबी मेरे हाथ में आ गई । आप सीधे अपनी आर्थिक विपन्नता का उल्लेख करते हुए एक नया आवेदन-पत्र दीजिए । हालांकि इसमें मुझे दिक्कत होगी, फिर भी कुछ करने का प्रयत्न करूंगा ।”

“आपके भतीजे साहब दो वार मकान खाली करने का तकाज़ा कर चुके । उन्हें समझा दीजिए कि” ।”

“वह मैं कह दूंगा, परेशान न हो । आप ऐसा कीजिए कि मी रुपये प्रति माह उसे वतौर किराये के दे दिया कीजिए । वह चुप रहेगा ।”

“ये सौ रुपये माहवार मैं कहा से लाऊंगा ?”

“कुछ तो करना ही होगा । आपने दखली इजारा लिखा है न ।”

दिवाकर मलिक मिर झुकाए सोचते रहे । कुछ ममझ में नहीं आया, तो यो ही हवा में बोल गए, “अच्छा, कोई उपाय करता हूँ ।”

“हा, बीच में मैं पड़ा हूँ न । वह अगले शनिवार को आने वाला भी है । आपने कुछ नहीं दिया, तो मेरा मर खा जाएगा ।” प्रकाश वावू बोले ।

दूसरे ही दिन दिवाकर मलिक ने अपनी विपन्नता का हवाला देते हुए एक आवेदन-पत्र कलाकार सहायता कोष के डायरेक्टर के दफ्तर में दे दिया ।

अद्भुत नृत्य-प्रदर्शन के लिए विवाहक मन्त्रिण को कई स्वर्ण और रत्नोत्सव प्राप्त हुए थे। अगले ही महीना जब प्रकाश बाबू का भतीजा दरपाद पर खड़ा होकर खोर-खोर से बुग-मसा गुनाने लगा तो विवाहक मन्त्रिण ने अनुरोध के स्वर में कहा "आप भीतर कम जाइए। मृत्योर्ध्वाने इन बात को नहीं जानत। आइए किराये के रूप में मैं आपकी कुछ गीतगाहूँ।" और पेट की आस धाम्त करन रहन के प्रेम में नगर के गेजर्स की निजा रिवाी में जाने में बच गए। पाठ स्वर्णपत्र और आठ रत्नोत्सव पर में और दीप थे। उनमें से विवाहक मन्त्रिण ने उन तीन स्वर्णपत्र गीत रिण और वह यह कहता हुआ जमा गया कि अगले ही महीने में भीतर बर मजाम ल्हासी कर दें बरना उन्हें अदायग हमक मिया मजबूर बनेगी। अज्ञान में नाबिर आणया पान में पुमिम भागवी और दुमदुमी बरबा वर बरान खासी करा लिया जाग्या।

दो माह होने को आ गए। फिर तीसरा और चौथा माह भी गुजर गया। प्रकाश बाबू का भतीजा हम कदर मायब हा गया जैसे अब उस में ना किराया चाहिए और न मजान। आठ पूर्वी का परीक्षाक्रम निरता था। उनमें प्रथम स्थान पाया था। जैसे दुखत हुए पाठ पर किरी न मजाम सया लिया हा। विवाहक मन्त्रिण लुग थे और इनी गुमी में पदाम की मिटाई की बुजान में दा स्वय की उपरिया लाइए हमपनी न बात व, "आठ पूजा में अदवान का न उपरिया का भाव मया दा। गत्र ना पुमनीन और बीनों का ही भाव मरानी हा न।

तभी किसी ने दरवाजा खटखटाया। पूर्वी में दरवाजा माना ना एक अश्रेष्ठ आदमी का सामन पया। उनमें बरा "विवाहक मन्त्रिण पर में हूँ, दा उन्हें मया।"

"मान बने में आठ है "



“कचहरी से।”

खबर पाकर दिवाकर मलिक अचरज में पड़े — भला कचहरी से कौन आया ? फिर सोचते-सोचते बैठक में आ गए। उस अघेड आदमी ने बतलाया, “मैं अदालत का नाज़िर हू। कल आपके यहाँ हम लोग आएंगे। मकान आपको खाली करना पड़ेगा। होशियार हो जाइए।”

“होशियार हो जाऊ, कैसे होशियार हो जाऊ ?” पूछते हुए दिवाकर मलिक जैसे काप गए। इसमें भला कौन-सी होशियारी चल सकती है ? बात तो बिलकुल सच है।

अघेड आदमी ने कहा, “अजी, हाकिम लोग तो सिर्फ दस्तखत करना जानते हैं। कुछ दस्तूरी दीजिए, तो हम मामला कुछ दिनों के लिए दाव दें। आप शरीफ आदमी हैं, मुझे तो बड़ा अफसोस हो रहा है... हा...। आज के ज़माने में लोग पैसा पहचानते हैं, आदमी नहीं।”

“आइए, आप अन्दर आकर बैठ जाइए।” दिवाकर मलिक कापते हुए बोले। और, स्वयं भीतर जाकर दमयन्ती से बोले, “भगवान को भोग लगाने के लिए जो जलेबिया ले आया हू, उनमें से कुछ प्लेट में रखकर दो। कचहरी से नाज़िर आया है।”

“पहले देवता को।”

“अरे भाई, वह देवता से भी बढकर है।” दिवाकर मलिक ने कहा। कचहरी का नाज़िर ! पुराना पापी है यह जगदम्बीलाल। दोनों हाथों से खाता है, और एक हाथ दूसरे हाथ की कारस्तानी नहीं जान पाता।

जब वह प्लेट में आयी हुई आधी से अधिक जलेबिया हज़म कर गया, तो सभ्यता के नाते दिवाकर मलिक ने पूछा, “और ले आऊ ?”

“बस दो-चार, ज्यादा नहीं।” जगदम्बीलाल बोला।

देवता के नाम पर आयी हुई सारी जलेबियों का आदमी ने भोग लगा लिया और पच्चीस रुपये दक्षिणा में लेकर चलता बना।

घोर अपमान की कल्पना करते हुए दिवाकर मलिक रात-भर जागते रहे। एक बार धीमे स्वर में दमयन्ती को पुकारा। जब तक दमयन्ती आखें खोलें तब तक दिवाकर मलिक ने सदा-सदा के लिए आखें बन्द कर ली। सिर वायी ओर लुढ़क पड़ा।

“भाम्यबर !

निवेदानुसार आपको सूचित किया जाता है कि आपके भाविक अभाव सम्बन्धी आन्दोलन-पत्र पर विचार किया जा चुका है और तदनुसार आपके नाम का 'सेई'ब एकाउण्ट मोनसी' पांच मी एक रुपये का चेक बनकर कार्यालय में रखा हुआ है। आप किसी कायदिलस का भाकर यहाँ में चेक प्राप्त कर लें।

इसका इस बात की अत्यावश्यक समझें कि इन रुपयों से आप परिवार के उपयोग के लिए जो भी खरीदें उसकी रसीद भी अफोहम्पासरी के कार्यालय में प्रस्तुत करें और प्रत्येक रसीद प्रत्येक विक्रम पत्राधिकारी द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित हो। भी उस और मिठाइयां कदापि न खरीदें। यदि हमारे कार्यालय का सेलापाल चेक आनाभी सं न के बार-बार दौड़ावे तो उस कैंपेन में जमपान कराने से जाहए और उसकी जब में पांच प्रतिशत की दर से पञ्चीम दरसे डाल दें। ऐसा नहीं करने पर आपको जो हूँपनी-परेपानी होगी उसके लिए हमारी कोई भी जिम्मेवारी नहीं होगी।

टाइप किया हुआ यह पत्र विवाकर नसिक के नाम कसाकार-महायता कोप के निदेशक के कार्यालय से तब आया जब हमयन्त्री देवी ने एक और स्वर्णपत्रक बचकर उनका आड-कर्म कर दिया था।

पत्र पढ़कर भा-बेटी रोने लगीं।

आज नगर के कमा-मंरुति भवन में बड़ी बहम-बहम थी। माव आ-जा रहे थे। हास में एक मुन्तर और बड़ा-सा मोम बहूतरा बना हुआ था। भवन के नीकर उस पर वरियां और बाहर आड़-आड़ कर बिछा रहे थे। मन्दाई मन्दाइयों ने आसपास की मड़न को एकदम माफ-मुयरा कर रखा था। लमा थारपत्र में भुषना पहल ही प्रकाशित हा चुकी थी और इससे पत्रन कई

दिनों तक विभिन्न वर्गों के लोगों की ओर से छोटे-छोटे सवेदनासूचक वयान भी छप चुके थे ।

दिवाकर मलिक के अमामयिक निधन पर आज शोकसभा आयोजित की गई थी । वक्ताओं की सूची इतनी लम्बी थी कि उन्हें एक चवूतरे पर बिठाना और मेढकों को तौलना बराबर लग रहा था । सभी दावा कर रहे थे कि दिवाकर मलिक को वे सबसे ज्यादा नज़दीक से जानते थे । कोई आपस में कह रहा था, “मैंने दिवाकर मलिक के घर तेरह बार चाय पी थी और दो बार भोजन किया था ।”

कोई कह रहा था, “खादी ग्रामोद्योग भवन में मैंने तीन बार मलिक जी को कन्सेशन रेट पर कम्बल दिलवाया था ।”

किसी ने कहा, “राशनिंग आफिस जाकर रोज राशन कार्ड बना देने के लिए धिधियाते थे । वहा का डीलिंग असिस्टेंट मेरा चेला था । मैं दौड़ा हुआ गया और तीसरे दिन राशन कार्ड बनवा दिया ।”

एक ने फुमफुसा कर कहा, “एक बात सबों को नहीं मालूम होगी । इसे सिर्फ मैं जानता हूँ । इनकी बड़ी लडकी का नाम कल्याणी था । वह किमी के साथ भाग निकली, आज तक पता नहीं चला ।”

सुनकर सभा के आयोजक बोले, “महाराज, यही बात मंच पर बोलने की कृपा मत कीजिएगा । मर जाने के बाद यहा गुणगान करने की परम्परा, जिन्दा रहने पर चाहे जो कर लीजिए । जिन्दा होने पर गुणों पर पर्दा भी डाल दीजिए, कोई बात नहीं ।”

अध्यक्ष महोदय पधार गए । यह थे—शिक्षा मन्त्री प्रकाश वाबू । वह भाषण नहीं करते थे, बल्कि दहाड़ते थे । एक माहव आयोजक से बोले, “अब हम लोग दिवाकर परिवार सहायता कोष खोलें और कम-से-कम दस हजार रसीद वही छपवा लें । बड़ा मज़ा आएगा ।”

किम कारण बड़ा मज़ा आएगा, इसे आयोजक महोदय मन-ही-मन समझ गए और मुस्करा कर बोले, “अभी चुप रहिए, वरना यहा एक-से-एक गिद्धराज हाज़िर हैं, ले उड़ेंगे । भला इस बात से कैसे इन्कार किया जा सकता है कि दिवाकर मलिक जैसे लोग तड़प-तड़प कर भले ही मर जाए, मगर हम जैसे कलाप्रशंसकों के लिए कल्याण के कई द्वार खोल जाते

हूँ ।'

शाकम्भरा में बारी-बारी से बजनायण बोन रहे थे। चक्रवर्त के ठीक पीछे त्रिबाकर मलिक का एक पित्र टंया था और उस पर एक बदनदार मामा सटक रही थी।

सरकार की ओर तो हमसती त्रिबाकर मलिक की विद्यवा के नाम एक संक्षिप्त पत्र लभी धागा है जब उधर शाकम्भरा की जा रही है

“सरकार ने निश्चय लिया है कि त्रिबाकर मलिक के ईतिहास उद्योग में जाने वाले सब मामलान—मुख्य मापघी पुरस्कार में मिलने परका तथा साम्रपत्रों का स्मृति-स्मारकस्वरूप राज्य के अणुहास में रखा जाए।

आपने अनुरोध किया जाना है कि आप उपरोक्त मात मामलान पण्डितों के अन्तर म्युजियम के क्वार्टर में पाम जमा कर दें। विदेश का उत्सर्जन करने पर सकल कार्रवाई की जाएगी।”

इधर शाकम्भरा समाप्त हो रही थी उधर सामने के मीनान में कोई मत मस्त फकीर एकठारे पर गा रहा था

‘यह किमने गीत बाया यह किमने गीत बाया ?’

जब घमां बुझ गई तो महफिल भरें बाया।

महिला कालेज की रजत जयन्ती मनाई जाने वाली है। बड़ी धूम है। पूरा कालेज सजाया जा रहा है। एक दिन ही तो और हाथ में है। बहुत ही बड़े और सफल मास्कृतिक कार्यक्रम की योजना है। लेडी प्रिंसिपल श्रीमती जोशी अत्यधिक व्यस्त देखी जा रही हैं। उन्हें सर खुजलाने तक की फुर्सत नहीं। राज्य के मुख्य मन्त्री रजत जयन्ती के दिन मारगभित भाषण करने वाले हैं। पहले वाले गवर्नर जा चुके हैं। जा क्या चुके हैं, उन्हें गवर्नरी से मुक्त कर दिया गया है। एक बार वह मुल्क के सबसे बड़े चौकीदार और चौकीदार के सबसे बड़े सलाहकार के यहाँ पहुँचे थे। कला और सस्कृति के विकास के लिए वह चाहते थे कि जिस राज्य में वह गवर्नर की हैसियत में रह रहे हैं, वहाँ के कलाकारों और बुद्धिजीवियों की एक नवीनतम आद्यन्त सूची सरकार अपने पास रखे और एक विभाग की स्थापना की जाए, जिसका काम इनकी सुधि लेना हो। यही स्थिति वह मुल्क के हर अन्य प्रांत में भी देखना चाहते थे।

मुल्क के सबसे बड़े चौकीदार के प्रधान सलाहकार ने नाराज होकर कहा था, "आप वहाँ गवर्नरी करते हैं या कलाकारों-बुद्धिजीवियों का दरवार लगाते हैं? हमने तो कुछ और ही सोचकर आपको गवर्नर बनाया था। मुझे सूचना मिली है कि आपसे ऐसे लोग बिना रोक-टोक मिला करते हैं। यह तो अच्छी बात नहीं है। प्रोफेसर चाहे अपने विषय का-वृहस्पति क्यों न हो, आखिर वह एक मास्टर की ही हैसियत रखता है न। और नाचने-गाने वालों की क्या औकात? राजभवन को तो आपने मुसाफिर-खाना बना रखा है।"

गवर्नर ने तब कहा था, "हाँ, यह बात सच है। मैं इन लोगों को अपने से बहुत बड़ा मानता हूँ।"

प्रधान सलाहकार का तेवर बदल गया था। उसने कहा, "आपको राज्य का खुदा बना कर भेजा गया था और आप वहाँ जाकर भक्तों के ही

भक्त बन गए। आपके यहाँ ने एक मन्त्री आए थे। आपका ध्यान करते हुए रोने लगे। उससे ही मामूम हुआ कि राजधरम में इन बसाकारों बुद्धिजीवियों का स्वागत मन्त्रियों के मुकाबले होता है। अब तब हठारों बोलत समय इनको पिताया था चुका है। इनके आय फल भी रत जात है। यह सब लुप्त कहां से आया ?

“मैंने उद्घाटन करने का धन्या छाड़ दिया है। इस पर बहुत लक्ष होता था। पुसिसवासे लंग आ जाते थे”। गबर्नर साहब ने कहा था।

प्रधान ससाहकार भी भीहें तन यह। मुने को मिसा “मुम्ह ठो यह भी बतलाया गया है कि आपसे मिलने के लिए जब कोई बसाकार या बुद्धिजीवी आपके कक्ष में प्रवेश करता है तो आप फौरन उसने सम्मान में उठ कर खड़े हो जाते हैं। उचित तो यह है कि पहले वह मुन कर आपके बरमों को अपनी आँखों से चूमे। सिर ऊपर उठाए, तो उताकी आँखों से आँसू झरक रहे हों” मैं अगर जानता कि आप यह करिबमा दिखलाएने तो कम-से-कम दो महीने आपको किमी मन्त्री के साथ ट्रेनिय मेन के लिए छोड़ दता। जनतन्त्र म ली-पधाम लोप कैस खुदा बन जाते हैं कैस उनसे मिसना कठिन हो जाता है।

गबर्नर साहब भी लमक गए थे। साफ-साफ कह दिया था “मुम्हमे ये सारे नाटक नहीं हो सकते। मैं घुटन महसूस करता हूँ।”

अबले महीने गबर्नर साहब की गबर्नरी छीन ली गई। मुना जाता है कि बेकारे अब एक विस्मयिघासय में पड़ात हैं।

इनके बाद दूसरे गबर्नर आए। इनको भी यहाँ रहते चार मास से पयादा हो रहे हैं। इस बीच पूर्वी बीच इक्कीस साल की हो गई है। इसन इन बीच के वर्षों में कायनिमकायन की बुनिया में अपना एक बलय मस्तिस्व बना लिया है। दो बार बिदेगां में हजारों बुद्धिजीवी अोताओं के सामन अपनी बादनकसा का प्रदर्शन कर अपना एक कीर्तिमान स्थापित कर लिया है। अब उसे और कुछ नहीं चाहिए, बस रुपयों पर जान बेती है फिदा रहती है। अपनी कसा ने साथ उसने धन का बह रिक्ता छोड़ दिया है जो कभी टूटता नहीं। रुपयों के मापसे में बह एकबय बेमुरख्यत है।

श्रीमती जोशी अपने दफ्तर में बैठी कुछ लिख रही थी कि हेड क्लर्क ने आकर सलाम किया और कहा, “पूर्वी मलिक के यहाँ गया था।”

उनकी ओर मुखातिब होते हुए श्रीमती जोशी ने पूछा, “अच्छा, वह आएगी न ?”

हेड क्लर्क ने उदास स्वर में कहा, “जी ना।”

“ना ? ना क्यों ?”

“भल्ला पडी और कहने लगी, ‘श्रीमती जोशी से कह दीजिएगा, पूर्वी ने मैट्रिक की परीक्षा पास कर ली है। और हा, तीन मिंटिंग वजाऊगी। पन्द्रह माँ रुपये देने को तैयार हो, तो अपने कार्यक्रम में मेरा नाम दीजिए। और जो बिना मेरी स्वीकृति के कार्यक्रम में मेरा नाम दिया, तो कह दीजिएगा, श्रीमती जोशी को कोर्ट का रास्ता देखना पड़ेगा।’” हेड क्लर्क ने बतलाया।

“पन्द्रह माँ रुपये ?”

“जी हा।” मैंने कहा, “हमारे पास फण्ड नहीं है। हम मात सौ से ज्यादा नहीं दे सकते,” तो झट बोल पडी, “आप यह रकम भी वचा सकते हैं। श्रीमती जोशी से कहिए, खुद वजा लें। वह तो डबल एम० ए० है। वह वायलिन हाथ में उठाएगी और उनकी डिग्रिया राग देश, राग भैरव, राग शंकरा यानी जो भी राग चाहेगी, वजाने लगेगी। मैं तो पन्द्रह माँ में पन्द्रह पैसों भी छोड़ने वाली नहीं। और हा, बार-बार मुझसे पूछताछ न की जाए। श्रीमती जोशी के यहाँ सगीन-शिक्षिका के पद के लिए मेरा कोई आवेदन-पत्र नहीं पट्टा है।”

“अच्छा, आप जाइए। मैं मोचूगी। मगर समय भी तो ज्यादा नहीं रह गया है। पूर्वी मलिक ने यह क्यों कहा कि वह मैट्रिक पास कर चुकी हैं ? मैट्रिक पास करने और वायलिन वजाने में क्या तालमेल ?” श्रीमती जोशी बोली।

“पता नहीं, मुझसे खुल कर इस बारे में कुछ नहीं कहा।”

श्रीमती जोशी दफ्तर में बाहर आती हैं और एक चपरासी को लेकर चल पडती हैं—वायलिन की जादूगरनी पूर्वी, दिवाकर मलिक की पुत्री, पूर्वी मलिक से मिलने। उनकी कार ननसनाती हुई आती है और एकाएक

गति धीमी कर दिबाकर मलिक के घर के सामने रुक जाती है। धीमी जोड़ी साड़ी संभालती हुई बाहर निकलती है और आगे बढ़कर दस्तक देती है।

पूर्वी द्वार खोल देती है। कहती है "ममस्ते बँटिए। ममर, क्याश समय न लीजिए। आपके कासज का हेड कमक आया था। मैंने सब कुछ बतसा दिया।"

"मैं इसीलिए स्वयं आई हूँ आपके पास। धीमती जोड़ी अत्यन्त नम्रता से कहती हैं।

पूर्वी जैसे पहले से सारी हुई है। कहने लगी "यह आभा तो आपके प्रधासन-तत्र की एक हुरकत है। धीमती जी बुध न भानिएगा। प्रधासन और कुछ जाने या न जान ममर इतना उकर जानता है कि किस मौके पर गीवड़ और किस मौके पर घर बन जाना चाहिए। आपका मैंने हेड बतक न कहलबा दिया था कि मैं मेट्रिक पास कर गई हूँ। मानूम हुआ होमा।

"मेट्रिक पास ?"

"हां और वह भी फस्ट डिबीजन से। ममर याद रलिए, मैं उठनी ही देर बेहद भाबुक रहती हूँ जितनी देर बायलिन बजाती रहती हूँ। उनक बाग विमान में यही बात रहती है कि जितना क्याश हूँ मरे इन नमाज से अपनी कमा का मुख्य बसूसा जाए। ओह आप तो परधान नबर आ रही हैं परधान न हाइए, मैं आपके कामेज में मौकरी मांभने नहीं आ सकती। हाँ आपके कामेज की कुछ छात्राएं संसीतबसा में मेघाबी होंगी वे मरीज भी हो सकती हैं वैसे तो उनकी सहायता कर सकती हूँ। धीमती जोड़ी मैं उम रास्त पर बिछ जाऊंगी जिन रास्त में कलाकारों की भीड़ गुजरेगी मेरे से हाठ घूम से घले रेंव जाएँ, मगर मैं उनके चरणा को भुमती रहूंगी ममर आपके कवचन में बत्राम के लिए डेढ़ हजार न एक पैसा कम नहीं लूंगी। इतनी बातें मयातार बोसत-बोसत पूर्वी का बेहदा नाम हो आया और वह फफक-फफक कर रलन लगी। धीमती जोड़ी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

समझा था जैसे पूर्वी यह सब विदित्वाचस्या में बोसने लगी है।

दौड़कर घर में जाती है और एक मध्यम आकार का सूटकेस लेकर लौटती है। उसे बड़ी तेजी से खोलती है और तीन चित्र निकालती है। इसी बीच श्रीमती जोशी बोल पड़ती हैं, “कलाकार आखिर अपने समाज का ही होता है। उसे अपने समाज के लिए।”

पूर्वी बड़ी तेजी से कहती है, “आप समाज की बातें करती हैं? देखिए ये तीनों समाज के ही अंग थे।” और तीन चित्र श्रीमती जोशी की ओर चढ़ाकर बोलती जाती है, “यह रही कल्याणी मलिक, भरी जवानी जब ढलने लगी और पैसे के अभाव में चाप शादी न कर सका, तो किसी के साथ भाग गई। तब समाज कहा था? और इन्हें देखिए—ये हैं मेरी मझली चहन, वागेश्वरी मलिक।—कृष्ण का रूप धारण कर नृत्य करते समय विलकुल कृष्ण बन जाने वाले दिवाकर मलिक की दूसरी पुत्री। इन्हें गले में फामी लगाकर ममार छोड़ना पडा। यह समाज तब भी था। और ये रहे मेरे कलामाद्यक पिता, दिवाकर मलिक। परेशानियों और घबराहट में जिनका हार्ट फेल हो गया और यह रही मैं, इनकी अन्तिम पहचान, पूर्वी मलिक। झूठ क्यों बोलू, मैं पैसे को दातों से पकड़ती हूँ, मगर नाजायज ढग से नहीं, वेडमानी से नहीं, नीचे की फाइल ऊपर करके नहीं।”

श्रीमती जोशी ने जैसे निवेदन करते हुए कहा, “आप इम प्रात की लाज हैं। आपने विदेशों तक में मुल्क का नाम आगे बढ़ाया है।”

“और मेरा चाप क्या इम मुल्क का कूडेदान था? जाइए, महाप्रभुओं के आगे दुम हिलाइए।” पूर्वी ने एकदम से फटकार दिया।

श्रीमती जोशी एक प्रकार से रोती हुई बाहर निकली और तब दरवाजे पर खड़ी होकर पूर्वी पागल की तरह ठहाके लगाने लगी।

